RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2017-19

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 55 अंक : 08 कुल पृष्ठ : 36 4 अगस्त, 2018

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

जब थी ऐसी देश की, दशा उस काल।
मरुधर भूमि ने जना, वीर शिरोमणि लाल।।
सौलह सौ पंचानवै, चवदस श्रावण मास।
जन्मे मरुधर देश में, बाबा दुर्गादास।।

HITKARI & SWARAJ

हितकारी मेडिकोज

राजकीय चिकित्सालय के सामने, बाड़मेर-344001 राजस्थान
फोन : 02982226666

प्रो. पृथ्वी सिंह राठौड़
आजाद सिंह राठौड़
सिद्धार्थ सिंह राठौड़

-: सम्बंधित फर्म :-

हितकारी & स्वराज इंटरप्राइजेज प्राइवेट लिमिटेड
हितकारी प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

संघशक्ति

4 अगस्त, 2018

वर्ष : 55 अंक-08

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/ रुपये, वार्षिक : 150 रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये , दस वर्षीय : 1300 /- रुपये

विषय - सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	05
❍ दुर्गादास	✍ श्री सोहनसिंह भदौरिया	06
❍ भगवत् सान्निध्य का अभ्यास	✍ स्वामी श्री यतीश्वरानन्द	08
❍ प्रेरक कथानक	✍ संकलित	13
❍ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	14
❍ महाभारत में क्षात्रधर्म	✍ संकलित	16
❍ करना और होना	✍ श्री कृपाकांक्षी	18
❍ सामान्य ज्ञान व नैतिक आचरण	✍ आचार्य श्री कनकनन्दी	19
❍ राजर्षि जनक-एक दार्शनिक राजा.....	✍ स्वामी श्री गोपालआनन्द बाबा	20
❍ हलवदार मेजर पीरूसिंह	✍ कुँ. श्री महेन्द्रसिंह छायण	22
❍ विचार-सरिता (त्रयत्रिंशत् लहरी)	✍ श्री विचारक	24
❍ भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में राजपूतों...	✍ श्री भंवरसिंह मांडासी	25
❍ युद्ध की भिक्षा	✍ श्री हनुवन्तसिंह नंगली	27
❍ समाज के युवाओं के नाम	✍ श्री पैपसिंह कल्लावास	28
❍ अपनी बात	✍	29

समाचार संक्षेप

कार्ययोजना बैठक :

दिनांक 15 जुलाई, 2018 को संघशक्ति, प्रांगण में श्री क्षत्रिय युवक संघ की कार्ययोजना बैठक सम्पन्न हुई। इसमें संघ के विभिन्न क्षेत्रों के प्रान्त प्रमुख तथा संभाग प्रमुख सम्मिलित हुए। आगामी मई माह में होने वाले उच्च प्रशिक्षण शिविर तक की अवधि में होने वाली सांघिक गतिविधियों की रूप रेखा सभी प्रान्त प्रमुख अपने-अपने क्षेत्रों की बनाकर लाए थे, जो सबके सामने रखी गई। प्रान्त में होने वाले शिविरों सम्बन्धी सूचनाएँ, प्रान्त में चल रही शाखाओं और नई शाखाएँ प्रारम्भ करने सम्बन्धी सूचनाएँ, प्रस्तावित स्नेह मिलन कार्यक्रम, सम्पर्क यात्राएँ, जयंतियों का आयोजन, संघशक्ति व पथ प्रेरक के ग्राहक बनाने का लक्ष्य आदि विषयों पर सभी ने अपनी-अपनी तय की गई जानकारी प्रस्तुत की। गुजरात में इसी कार्य सम्बन्धी योजना हेतु पूर्व में बैठक हो चुकी थी, पर गुजरात से भी सम्बन्धित प्रांत प्रमुख व संभाग प्रमुख सम्मिलित हुए। प्रस्तुत कार्ययोजना को संघप्रमुखश्री ने भी देखा और यथा आवश्यकता निर्देश भी दिए। नई पीढ़ी को संघ कार्य सुचारू रूप से चलाना है, इसलिए स्वयं निर्णय लेकर गतिविधियों की रूपरेखा निश्चित करने का उनको पूरा अवसर इस प्रकार दिया जाता है। आवश्यकता हो तभी कारण समझाते हुए कुछ फेर-बदल किया जाता है ताकि कारण समझकर वे अपनी अनुभूति को निखार देते रहें।

संचालक कार्यशाला :

संघ कार्य का मूल है शाखा और शिविर। शाखाएँ भी विस्तार पा रही हैं और शिविर खूब लग रहे हैं। एक ही समय में 13-14 शिविर लगते हैं। चार दिन का शिविर लगाने के लिये भी उन चार दिनों में कम से कम दो दिन का तो अवकाश होना चाहिए। जब-जब ऐसा अवकाश का अवसर आता है, हर क्षेत्र उसका शिविर में सदुपयोग करना चाहता है और इस प्रकार एक ही समय में एक साथ कई शिविर होते हैं। तब उन शिविरों के संचालन के लिये भी अधिक संख्या में संचालक चाहिए, तो उसके सहायक के रूप में भी प्रशिक्षित साथी चाहिए। इसलिये शिविर संचालन हेतु कार्यशाला आयोजित कर उन्हें प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक होता है। जुलाई माह के प्रथम दिन जोधपुर में ऐसी कार्य शाला आयोजित की गई। कुछ अन्तराल पर ऐसी कार्यशालाएँ दोहराई जाती रही हैं, जो आवश्यक है।

शाखाओं की संख्या भी निरंतर बढ रही है। निरन्तर अभ्यास की प्रक्रिया शाखाओं में ही संभव है। अतः प्रत्येक शाखा का शिक्षण प्रमुख शाखा संचालन योग्यता पूर्वक कर सके, यह आवश्यक है। इसके लिये शाखा के शिक्षण प्रमुख को प्रशिक्षित किया जाना भी उतना ही आवश्यक है। एक-दो प्राथमिक शिविर किया हुआ स्वयंसेवक नई शाखा प्रारम्भ करता है तो शायद वह शाखा संचालन ठीक प्रकार से न कर सके। पर नई शाखाओं के लिये तो ऐसे ही स्वयंसेवक मिल पाते हैं अतः उनको भी शाखा संचालन हेतु प्रशिक्षित किए जाने के लिये कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए। संघप्रमुखश्री ने इस पर जोर देकर ऐसी कार्यशालाएँ करने का निर्देश दिया ताकि शाखाओं की गुणवत्ता बढे।

सम्पर्क यात्राएँ :

गुजरात के बनासकांठा और मेहसाणा प्रान्त में कुछ माह से सम्पर्क यात्राएँ जोरों पर चल रही हैं। लक्ष्य बनाकर अलग-अलग दल के रूप में यात्राओं पर निकले और निर्धारित गाँवों में पहुँचकर समाज बन्धुओं से वार्ताएँ की। समाज की वर्तमान स्थिति, उस विपरीत परिस्थिति में अस्तित्व की सुरक्षा, हमारा चारित्रिक विकास और उसमें क्षत्रिय युवक संघ की भूमिका पर जानकारियाँ समाज को दी जाती। साथ ही जहाँ शाखा प्रारम्भ होने की संभावना दिखती वहाँ आगे सम्पर्क बनाए रखकर शाखाएँ भी प्रारम्भ की जाती। पुरानी शाखाएँ जो चल रही हैं, उनको संभालते रहने के लिये भी यात्राएँ की गई। ग्रामवासियों की माँग पर कुछ जगह शिविरों के आयोजन हेतु भी पुनः सम्पर्क किया जा रहा है। इसी प्रकार की यात्राएँ सूरत में भी की गई। गुजरात के अलावा राजस्थान में भी शिविरों के आयोजन में सहयोग लेने हेतु कुछ यात्राएँ की गई।

*

चलता रहे मेरा संघ

(संघशक्ति प्रांगण जयपुर में आयोजित विशेष शिविर में दिनांक 16.2.2007 को प्रातःकालीन सत्र में संघप्रमुख श्री भगवानसिंहजी रोलसाहबसर के उद्‌बोधन का संक्षेप)

संघ में हम सभी आते हैं और अपनी समझ से काम करते हैं। जैसी हमारी समझ बनी, उसी के अनुसार हम अपना-अपना संघ बना लेते हैं। भगवान को भक्त लोग अनेक-अनेक रूपों में देखते हैं और अपने देखे हुए रूप को ही भगवान मान लेते हैं। ऐसे ही हमने अपना-अपना संघ बना लिया है। विभिन्नताएँ संसार में हैं, अनेकताएँ परमेश्वर की ही बनाई हुई हैं। उनसे ही विचित्रताएँ दिखती हैं।

परमेश्वर ने संसार को सुन्दर बनाने के लिये उन अनेकताओं को रचा है। लेकिन भगवान ने एक अनूठी एकता का बीजारोपण भी किया है। इन सब अनेकताओं में तात्विक एकता है। उस तात्विक एकता को समझने का अधिकार व सामर्थ्य या तो परमेश्वर में है या उसके सबसे समीप योनि मनुष्य योनि को है। इन्द्रियों से परे की चीज को परमेश्वर की श्रेष्ठ कृति ही जान सकती है। संघ भी हमें यही शिक्षा देता है कि संसार में विषमताएँ हैं, लेकिन इन सभी विषमताओं के परे एक ऐसा समत्व है जो हमको ईश्वर के समीप पहुँचाता है। उसको समझने का प्रयास करें। ईशोपनिषद का मंत्र है-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजिथाः मा गृधःकस्यस्विद्धनम्।।

अर्थात् जड़, चेतन सभी ब्रह्म से व्याप्त हैं, त्याग भावना के साथ उपयोग करो, गिद्ध दृष्टि न रखो, क्योंकि धन किसका है? सब उसी का है।

पर कण-कण में ब्रह्म है, भगवान है, यह दिखाई कैसे दे। संघ की कार्यप्रणाली हम को उस ओर अग्रसर करती है। हम प्रारम्भ में संघ में ईश्वर को जानने के लिये नहीं आए थे। किस शक्ति ने हमको खींचकर संघ में बुला लिया, यह हम नहीं जानते। शायद क्षात्रधर्म के बलवती आकर्षण से प्रेरित होकर हम आए।

ईश्वर हमारे पिता हैं, हमारे शारीरिक पिता भी हमारे पिता हैं। दोनों ही बातें सत्य हैं। हमारे शारीरिक पिता के प्रति दायित्व के रूप में हमारे पूर्वजों का जो ऋण है, उसे चुकाने के लिये हम संघ में आए हैं, यह सत्य है। पर यह परमेश्वर प्राप्ति का मार्ग है, यह भी सत्य है और इस प्रकार इस मार्ग से हम हमारे शाश्वत उद्देश्य की प्राप्ति की ओर बढ रहे हैं। इन बातों को जो समझ लेता है, जान लेता है, वह शान्ति पाता है।

हमारे यहाँ आने के कारण को हम आगे बढाएँ। जो हमने आज तक यहाँ पाया है वह हमारे पास में रहे और जो न पाया वह अब पाएँ। यही योगक्षेम है। जिस कारण से हम यहाँ आए, उसको आगे बढाएँ। हमने संघ में ही सुना था कि 'किए बिना कुछ होता नहीं और दिए बिना कुछ मिलता नहीं।' हमें जो अग्रेतर प्राप्ति चाहिए, उसके लिये हमें श्रेष्ठता को अपनाना होगा। यह शिविर भी उसी के लिये है और ईश्वर की प्रेरणा से ही शिविर का आयोजन और आपका सम्मिलित होना संभव हुआ है। संघ में रहकर किसी भी प्रकार के भ्रम में न रहें। संशय रहित होकर जाएँ। संशयों, भ्रमों के बोझ को लेकर यात्रा नहीं कर पाएंगे। इसलिए बोझ रहित होकर जाना है।

सारी दुनिया अत्यन्त व्यस्त है। विद्यार्थी, अध्यापक, मालिक, नौकर, मजदूर, किसान, नेता किसी के पास समय नहीं है। समय गया कहाँ? मानव साधनहीन था, अनपढ़ था, अविकसित था, तब समय मिलता था। अब नहीं। जमीन कम हो गई क्योंकि रहने वाले लोग अधिक हो गए, पर समय कम क्यों पड़ गया? भगवान का दिया हुआ समय गया कहाँ? शायद एक कारण यह है कि जीवन के प्रति गंभीरता नहीं है। गंभीरता के अभाव में उपलब्ध समय का सदुपयोग नहीं हो पा रहा।

गीता कहती है, विधिपूर्वक कर्म किए बिना परम तत्व की प्राप्ति नहीं होती। कर ज्यादा रहे हैं पर परिणाम कम आ रहे हैं। विधिपूर्वक अर्थात् गंभीरतापूर्वक नहीं

(शेष पृष्ठ 12 पर)

दुर्गादास

– सोहनसिंह भदौरिया

श्री दुर्गादास का जन्म श्रावण शुक्ला चतुर्दशी संवत् 1695 को एक साधारण परिवार में हुआ था। श्री क्षत्रिय युवक संघ एवं अन्य कई संस्थाओं द्वारा प्रतिवर्ष श्री दुर्गादास जयन्ती मनाई जाती है। क्या यह जयन्ती सरकारी आदेशानुसार पन्द्रह अगस्त या छब्बीस जनवरी की तरह मनाई जाती है? क्या ये महात्मा गाँधी या पंडित जवाहरलाल नेहरू की तरह विगत स्वतंत्रता संघर्ष से सम्बन्धित व्यक्ति थे जिनकी जयन्तियाँ शासन के आदेशानुसार मनाई जाती है? धार्मिक पर्व के रूप में रामनवमी या कृष्ण जन्माष्टमी मनाई जाती है, क्या दुर्गादास जयन्ती भी उसी तरह का धार्मिक उत्सव है? महाराणा प्रताप की जयन्ती प्रथम स्वतंत्रता सेनानी के रूप में मनाते हैं। छत्रपति शिवाजी की जयन्ती हिन्दू-पद-पातशाही के संस्थापक के रूप में मनाते हैं। क्या दुर्गादासजी भी कहीं के शासक थे या उन्होंने नई राज्य व्यवस्था स्थापित की थी जिस हेतु उन्हें स्मरण किया जाता है? प्रस्तुत निबन्ध इसी प्रश्न का उत्तर खोजने का एक लघु प्रयास है कि भारतीय राजनीति में या राजस्थान की तात्कालिक परिस्थितियों में उन्होंने ऐसा क्या किया कि हम उनकी जयन्ती मनावें।

हमारे में तथा दुर्गादासजी में प्रमुखत: दो समानताएँ हैं, प्रथमत: वे भी आप और मेरी तरह के एक क्षत्रिय थे। रक्त, वर्ण व संस्कारों की एकरूपता दुर्गादासजी को हमारे समीप अनुभव कराती है। हमें भाव मिलते हैं कि हमारे प्रेरणास्रोत एवं प्रेरणा के लक्ष्य दुर्गादासजी हैं। हर क्षत्रिय उनमें एकरूपता देखता है।

राणा प्रताप, हम्मीर, मालदेवजी, जसवन्तसिंहजी, कर्णसिंहजी, पृथ्वीराज चौहान आदि ने भारतीय इतिहास में कई स्वर्णिम पृष्ठ जोड़े हैं-लेकिन ये सभी कुल परम्परा से राजा, महाराजा, महाराणा, सम्राट थे। जन्मजात शासक के नाते उन्हें बहुत से अधिकार व लाभ स्वत: प्राप्त थे। जबकि श्री दुर्गादास, श्री तनसिंहजी, आयुवानसिंहजी, आप और हम जैसों की तरह साधारण मध्यम-निम्न आय वर्ग के क्षत्रियों में से थे। कृषि-कर्म, पशु-पालन या साधारण सी नौकरी ही जिनका सहारा होता है। उनके पास न छत्र थे, न सिंहासन था, न बिरद बखानने वाले चारण थे। इस नाते भी वे हमारे अधिक निकट थे।

आज भी अधिकांश क्षत्रियों की आय का साधन कृषि व पशुपालन ही है। बालक दुर्गादास भी अपने खेत की रखवाली करते थे। एक बार जोधपुर के सरकारी ऊँट बालक दुर्गादास के गाँव के खेतों में घुस पड़े। दुर्गादास के बार-बार मना करने पर भी राज-मद से ग्रसित चरवाहे (रेबारी) ने हठ पूर्वक खेत में ऊँट घुसाना जारी रखा तो दुर्गादास ने कुछ ऊँटों की गर्दनें काट डाली। ''अपने अधिकारों की रक्षा के लिये निर्भयता पूर्वक करणीय कर्म करना क्षात्र-धर्म के अन्तरगत ही आता है।'' यह बात क्षत्रिय-बालक-दुर्गादास को पढ़ानी नहीं पड़ी थी, वरन् संस्कार रूप में स्वत: ही मिली थी। कसाई दिन भर पशु काटता है पर वह वीर नहीं कहलाता, जबकि क्षत्रिय स्वधर्म व स्व-अधिकार अथवा दूसरे के दुख निवारण हेतु जो भी वध करता है वह वीरता है।

कल्पना करिये एक बालक अदब से दरबार में खड़ा है। राजा ने प्रश्न किया तुमने ऊँट को मारा, बालक ने निर्भयता से उत्तर दिया जी हाँ, चूंकि ऊँट हमारे खेतों को उजाड़ रहे थे अत: उन्हें मैंने मारा। राजा ने कड़क कर पूछा ''कैसे मारा?'' बालक ने देखा बाहर कुछ ऊँट खड़े थे, उनमें से एक ऊँट की गर्दन उड़ा दी व जाकर राजा को बताया कि इस तरह उस ऊँट की गर्दन काट डाली गई थी।

एक कुम्हार को कहीं हीरा पड़ा हुआ मिल गया। उसने उसे अपने गधे के गले में लटका दिया। एक दिन बर्तन बेचने वह जौहरी की हवेली पर गया, जौहरी ने हीरे को परखा और उस हीरे को लगभग मुफ्त में ही खरीद लिया। पारखियों के अभाव में कितने ही हीरे धूल

में दबे रह जाते हैं या गधे के गले की शोभा बढाते हैं। महाराजा जसवन्तसिंह की पारखी नजर ने दुर्गादास रूपी हीरे की परख कर ली व उन्हें अपने खास-स्टाफ में नियुक्ति दे दी। आज हमारी क्षत्रिय संस्थाओं में जौहरियों का अकाल सा है। क्षत्रिय युवक-बालिकाओं की प्रतिभायें पारखियों के अभाव में या तो मिट्टी तले दबी हुई है, या शराब के ठेकेदारों, माफिया ग्रुपों या लपका-गिरोहों के हत्थे चढकर थानों में हाजरियाँ दे रहे हैं। काश इन दुर्गादासों को भी कोई जसवन्तसिंह मिल जाते।

एक बार जोधपुर नरेश शिकार खेलने जंगल में गये। दोपहर को पेड़ों के नीचे विश्राम करने को डेरे डाले। क्लान्त दुर्गादासजी भी एक पेड़ की छाया में लेट गये। निद्रादेवी ने आ घेरा। कुछ समयोपरान्त धूप उनके मुँह पर पड़ने लगी। महाराजा जसवन्तसिंहजी ने जब देखा कि धूप से दुर्गादास की नींद खुलेगी तो उन्होंने अपना रूमाल उनके मुँह पर फैला दिया। उपस्थित बड़े सिरदारों सामन्तों को यह बहुत ही बुरा लगा कि स्वयं महाराजा अपने हाथों से एक साधारण राजपूत, वह भी उनके अधिनस्थ, के मुँह पर स्वयं का रूमाल महज उसे धूप से बचाने के लिये फैलावें। उन्होंने अर्ज की कि हुजूर स्वयं ने एक इतने अदने से राजपूत के मुँह पर खुद का रूमाल फैला कर छाया की, यह तो सामान्य शिष्टाचार के विपरीत है। महाराजा ने उत्तर दिया, 'आज मैंने मात्र दुर्गादास के मुँह पर छाया की है, कभी यह युवक पूरे मारवाड़ पर छाया करेगा।' जो लोग पूरा वृतांत जानते हैं, उन्हें यह भली प्रकार विदित है कि दुर्गादास ने अजीतसिंह को मुसलमान न होने देने में, जोधपुर की खालसा समाप्त करवाने में और पुन: अजीतसिंह को राज्याधिकार दिलाने में जो कार्य किया उसने महाराजा जसवन्तसिंह की ''मारवाड़ पर छाया करने'' की भविष्यवाणी को सिद्ध कर दिया।

राणा प्रताप को तो जीत के बाद मेवाड़ का राज्य मिलना था। शिवाजी को विजय के बाद ''पातशाही'' मिलनी थी, पर जयमल और फत्ताजी को तथा तानाजी मालसुरे को क्या मिलना था? क्या उनका समर्पण व देश-भक्ति का भाव राणा प्रताप या शिवाजी से अधिक नहीं था। अगर श्री दुर्गादासजी अजीतसिंह को इस्लाम कबूल करवाने में कुटिल औरंगजेब की मदद करते तो शायद उन्हें बड़ी जागीर बख्श दी जाती। किन्तु त्यागी दुर्गादास के क्षात्र संस्कारों ने उन्हें कभी विचलित नहीं होने दिया। अपनी जान जोखिम में डालकर उन्होंने अजीतसिंह की रक्षा की, उन्हें योग्य बनाया उनका राज्य उन्हें वापिस लौटाया। ऐसी नि:स्वार्थ स्वामी भक्ति दुर्गादास जैसे संस्कारित क्षत्रिय ही कर सकते हैं।

प्राय: अच्छे योद्धा कूटनीतिज्ञ नहीं होते तथा अच्छे कूटनीतिज्ञ अच्छे योद्धा नहीं होते। श्री दुर्गादास की शस्त्र-नीति व कूट-नीति दोनों पर पकड़ थी। उन्होंने मराठों, राजपूतों तथा सिक्खों का एक संगठन बनाने के प्रयास भी किये थे। लेकिन छत्रपति शिवाजी की मृत्यु तथा उनके पुत्र साहूजी की अनिच्छा के कारण वे उसे सफल नहीं कर सके।

शायद यह भारतीय इतिहास की विलक्षण एवं एकमात्र घटना है जिसमें वीर दुर्गादास ने कुटिल औरंगजेब जैसे बादशाह को इसके लिये बाध्य कर दिया था कि उसकी जमानत एक सिपाही दे। औरंगजेब के पुत्र अकबर का एक पुत्र और एक पुत्री दुर्गादास के पास थे। उन्हें छुड़वाने के लिये औरंगजेब ने कुछ वचन दिये, जिन पर अविश्वास प्रकट करते हुये दुर्गादास ने किसी की जमानत चाही। औरंगजेब ने नगर सेठ की जमानत पेश की। दुर्गादास सवेरे सवेरे नगर सेठ की हवेली के पास से घोड़े पर निकले। नगर सेठ के घर की कुछ महिलायें बाहर शौचादि कर रही थी। दुर्गादासजी को आता देखकर भी वे शौचकर्म व वार्तालाप में लगी रही। कुछ दूर जाने पर पठान-सिपाहियों का मोहल्ला आया। एक घर में एक युवती स्नान कर रही थी। उसे जैसे ही आभास हुआ कि किसी पुरुष की नजर उस पर पड़ सकती है वह पानी की हौदी में कूद गई। दुर्गादासजी ने बादशाह को कहलवाया कि निर्लज्ज औरतें वचन की पक्की संतानों को पैदा नहीं कर सकती, अत: नगर सेठ की जमानत नामंजूर है। यदि वे जमानत देना चाहते हैं, तो अपने उस सिपाही पठान की जमानत दिलवावें जिसकी संतानें सलज्ज

(शेष पृष्ठ 12 पर)

गतांक से आगे

भगवत् सान्निध्य का अभ्यास

– स्वामी यतीश्वरानन्द

जगत के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन :

इस एकत्व के वास्तविक साक्षात्कार के पूर्व भी अपनी साधना के दौरान उसकी कल्पना और अनुभूति करनी चाहिए। सत्य की स्पष्ट धारणा के बिना कर्म खतरनाक हो सकता है। संसार में कर्म करते समय हमें लोगों के साथ रहना मिलना-जुलना पड़ता है। अत: यह आवश्यक है कि प्रारम्भ में ही एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण को स्थिर कर लिया जाए। अत: साधक को कल्पना की सहायता लेनी चाहिए। पतञ्जलि अपने योगसूत्रों में कहते हैं : ***''वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम्''*** अर्थात् ''योग के विपरीत विचारों की बाधा को दूर करने के लिये प्रतिपक्ष चिंतन किया जाना चाहिए।''

अत: जब कभी बुरे विचार या बुरी कल्पना मन में उठे, तब विपरीत शुभ विचारों को मन में उठाओ। सही प्रकार की शुभ कल्पनाओं को बुरी कल्पनाओं का स्थान लेना चाहिए। यह अन्तिम समाधान नहीं है, लेकिन अधिकांश लोग प्रारम्भ में यही कर सकते हैं। यह लुटेरों को भगाने के लिये पुलिस की सहायता लेने के समान है। लेकिन सुरक्षित स्थान पर पहुँचने पर हमें पुलिस की और आवश्यकता नहीं होती। अत: साक्षात्कार होने तक हमें शुभ कल्पनाओं की सहायता लेनी चाहिए। इनके बिना हम इस संसार में नहीं रह सकते और आध्यात्मिक प्रगति नहीं कर सकते।

फिर भी हमें यह देखना चाहिए कि कल्पना कोई गलत दिशा न ले ले। उसे विवेक और वैराग्य तथा आत्मा के स्वरूप पर आधारित होना चाहिए। तुम्हारा, दूसरों के प्रति दृष्टिकोण तुम्हारे अपने प्रति दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यदि तुम स्वयं को देह समझोगे तो तुम्हें अपने आसपास मानव शरीर ही दिखायी देंगे। अगर तुम अपने को देह में स्थित ज्योतिर्मय आत्मा समझोगे तो तुम्हें वही ज्योति सबमें प्रकाशित होती दिखाई देगी।

जब तक हम कभी न कभी अशुभ का सामना करने, तथा उसमें भी परमात्मा का दर्शन करने के लिये तत्पर नहीं होते, तब तक हमारी समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता। हमें रूप से अधिक तथ्य को, शुभ और अशुभ से अधिक परमात्मसत्ता को महत्त्व देना सीखना चाहिए। हम शुभ और अशुभ से परे विद्यमान परमात्मसत्ता की ओर ध्यान दिये बिना शुभ और अशुभ को लेकर व्यस्त रहते हैं। हमें कहना चाहिए, ''रूप मेरे लिये महत्त्वपूर्ण नहीं है, मैं तत्त्व को अधिक महत्त्व देता हूँ।''

शिवजी के कुछ भक्त सभी नारियों को पार्वती तथा सभी पुरुषों को महेश्वर शिव समझते हैं, और उसके बाद इन दोनों, भगवान और भगवती को उस सत्ता में विलीन कर देते हैं, जिससे वे उत्पन्न हुए हैं। इस तरह ये उपासक कई समस्याओं को सुलझा लेते हैं। यदि कोई व्यक्ति सभी नारियों को भगवती और सभी पुरुषों को भगवान के रूप में देखने लगे, तो इससे कितना फर्क पड़ जायेगा!

कुछ अन्य भक्त सभी पुरुषों को श्रीरामकृष्ण तथा सभी स्त्रियों को माँ शारदा के रूप समझते हैं, और अन्त में उनका भी अतिक्रमण कर उन दोनों की पृष्ठभूमि में विद्यमान परमात्मा तक पहुँच जाते हैं। इसी तरह हमारी समस्याओं का सच्चा समाधान सम्भव है। अच्छा, हमारी वर्तमान स्थिति में उद्विग्न कर रहे विचार तथा अशुभ रूपों की उपेक्षा की जा सकती है, लेकिन यह कभी भी समाधान नहीं हो सकता। एक समय ऐसा आना चाहिए जब हम शुभ और अशुभ दोनों के पीछे की अद्वितीय सत्ता को देख सकें और तब शुभ और अशुभ हमें प्रभावित नहीं करेंगे।

और यदि हम इन विभिन्न भौतिक रूपों को वास्तविक सत्ताओं के रूप में कभी नहीं, बल्कि निराकार की अभिव्यक्तियों के रूप में देखने में सचमुच समर्थ हों; यदि हम जड़ पदार्थ को विचारों की अभिव्यक्तियों के रूप

में तथा विचारों को अनन्त चैतन्य की अभिव्यक्ति के रूप में देखने में समर्थ हो सकें, तब हम सभी वस्तुओं को उनके सही परिप्रेक्ष्य में, सही स्थिति में देख पायेंगे। तब फिर हम भौतिक अथवा मानसिक रूपों मात्र से भ्रमित नहीं होंगे। भगवत् सान्निध्य के अभ्यास के लिये ऐसा दृष्टिकोण आवश्यक है।

भौतिक दृष्टि से हमारा अनन्त भौतिक ब्रह्माण्ड के साथ, मानसिक स्तर पर अनन्त-विराट् मन के साथ तथा आध्यात्मिक दृष्टि से अनन्त परमात्मा के साथ तादात्म्य होना चाहिए। और तब हम सभी बातों को उनकी सही भूमिका में, सही दृष्टि से देख, तथा तदनुरूप कार्य कर सकेंगे। ससीम का सदा असीम के साथ, सभी विभिन्न स्तरों पर चेतना के सभी विविध रूपों के साथ तादात्म्य होना चाहिए। परमात्मा के सान्निध्य का सदा, सभी स्तरों पर अनुभव होना चाहिए।

विराट् शक्ति का नियन्त्रण :

व्यष्टि मन, समष्टि मन के साथ जुड़ा रहता है तथा हमारी मानसिक शक्ति ईश्वरीय स्रोत से आती है। इस मानसिक शक्ति को नियन्त्रित और संचालित करना हमें आना चाहिए। ऊर्जा का निम्न केन्द्रों में प्रवाह रोकने के लिये, तथा हमारी इन्द्रियों के माध्यम से उसे बाहर जाने, व्यर्थ विचारों, चिंता एवं व्यर्थ बातों के द्वारा नष्ट होने से बचाने के लिये नियंत्रण आवश्यक है। इससे प्रारम्भ में कुछ तनाव उत्पन्न होता है, जो अपरिहार्य है। सिद्ध पुरुषों में ऐसे नियंत्रण की आवश्यकता नहीं रहती। उसकी सारी मानसिक ऊर्जा उच्चतर केन्द्रों की ओर प्रवाहित होती है। लेकिन हम लोगों के लिये सचेतन सज्ञान नियंत्रण अत्यावश्यक है। अचेतन नियंत्रण को मनोविज्ञ लोग दमन करते हैं और कुछ लोगों के लिये, कुछ प्रकार के दमन हानिकारक होते हैं। लेकिन सचेतन नियंत्रण, समझबूझकर किया गया नियंत्रण, आध्यात्मिक जीवन के लिये ही नहीं, बल्कि सभी स्वस्थ स्वाभाविक सामाजिक जीवन के लिये भी आवश्यक है। इस विषय में भारतीय मनोविज्ञान और पाश्चात्य मनोविज्ञान में अन्तर है।

ईश्वरीय शक्ति हम सभी के भीतर प्रवाहित हो रही है। हम सभी न्यूनाधिक मात्रा में (परमात्मा के हाथों में) यंत्र हैं। लेकिन जब हम इस ऊर्जा के निम्न-केन्द्रों से प्रवाह को समझबूझकर रोककर उच्चतर केन्द्रों से अभिव्यक्त होने देते हैं, तब हम नित्य ताजगी का अनुभव करते हैं। तब फिर जहाँ तक बौद्धिक जीवन का प्रश्न है, हमारे लिये कोई वार्धक्य नहीं होता। कभी-कभी पूर्व-संस्कारों एवं प्रवृत्तियों के कारण हम उच्चतर स्तरों की क्रियाशीलता बनाये नहीं रख पाते, तब नीचे की ओर एक तीव्र खिंचाव होता है। एक वास्तविक खींचतान चलती है, जो विकास के लिये अपरिहार्य है। हम ऊर्जा के प्रवाह को रोक नहीं सकते, पर उसे सोच-विचार कर, सचेतन रूप से, इच्छाशक्ति की सहायता से एक उच्चतर दिशा प्रदान कर सकते हैं।

सचेतन बुद्धिमत्तायुक्त चिंतन आवश्यक है। सचेतन चिंतन बाधाओं को दूर करता है और व्यवधान दूर होने पर अधिक मानसिक शक्ति हममें प्रवाहित होती है।

सर्वप्रथम इच्छाशक्ति की सहायता से सज्ञान प्रवाह प्रारम्भ करो। उसके बाद वह बना रहता है। नये विचारों को सोचने, चिंतन और अभिव्यक्ति के नये मार्गों को खोजने का प्रयत्न करो, और ऐसा होने पर मानसिक शक्ति को दिशा प्रदान करने का कार्य स्वाभाविक और बिना प्रयास के होने लगता है।

सचेतन उच्चतर चिंतन के द्वारा हम उच्चतर मार्गों का द्वार खोल देते हैं, और मार्ग खुल जाने पर उच्चतर चिंतन आसान हो जाता है। उच्चतर विचार प्रवाहित होने लगते हैं; वस्तुत: वे बड़ी तेजी से उठने लगते हैं। लेकिन सदा सचेतन रूप से, इच्छाशक्ति की सहायता से इस प्रक्रिया को प्रारम्भ करना चाहिए। यदि उच्चतर विचार अनजाने में हममें उठते हों, तो किसी दिन निम्नतर विचार भी उठेंगे। अत: अचेतन प्रक्रिया से यथासम्भव बचना चाहिए।

उच्चतर विचारों को सचेतन रूप से हममें प्रवाहित होने देना चाहिए। इसे अचेतन-प्रक्रिया नहीं बनने देना

चाहिए। सचेतन संघर्ष से उच्चतर मार्गों के खुलने पर उच्चतर विचार सचेतन रूप से हममें उठते हैं, और तब आध्यात्मिक जीवन बहुत आसान हो जाता है। एक नया मनोवैज्ञानिक और स्नायविक रास्ता खुल जाता है, जिससे ये उच्चतर विचार बिना बाधा के प्रवाहित हो सकते हैं। उच्चतर का वास्तविक अर्थ है-गहरे। हम बाह्य आकाश की अपेक्षा से ''उच्चतर'' कहते हैं, लेकिन आध्यात्मिक जीवन में आन्तरिक चेतना का महत्त्व है। अत: मानसिक ऊर्जा के केन्द्रों और मार्गों के संदर्भ में हमें ''गहरे'' शब्द का उपयोग करना चाहिए। जो हो, हमारे लिये सबसे महत्त्वपूर्ण बात है, प्रवाह को सचेतन रूप से प्रारम्भ करना। यह प्रारम्भिक कर्तव्य है, और उसके बाद अन्य सब बातें होती जाती है।

उच्चतर केन्द्रों का जागरण :

ससीम सदा असीम के संस्पर्श में है। निम्न स्तरों पर यह अचेतन रहता है। उच्चस्तर पर यह सचेतन हो जाता है, जब तुम उसका अनुभव करते हो। उच्चतर स्तर पर उठकर ऊर्जा की उच्चतर अभिव्यक्ति करना तुम्हारा प्रस्तुत कार्य है।

साधक का कार्य उच्चतर केन्द्रों को क्रियाशील करना, उन्हें जगाना है। निम्न केन्द्रों की क्रिया को सचेतन रूप से बन्द करके उच्चतर केन्द्रों को गतिशील करना चाहिए, लेकिन यह कार्य सज्ञान किया जाना चाहिए। यह एक सज्ञान, सोचे-विचारे की गयी प्रक्रिया होनी चाहिए। जप, ध्यान, प्रार्थना इत्यादि सभी उच्चतर केन्द्रों को प्रारम्भ करने के लिये हैं।

किसी समय तुम निम्न तथा उच्च केन्द्रों को युगपत् अनुभव कर सकते हो, अर्थात् दोनों एक ही समय क्रियाशील होना चाहते हैं, और तब एक भयानक खींचतान होती है, और यह अपरिहार्य है तथा सभी को इस स्थिति से गुजरना पड़ता है। तब तुम्हें महान इच्छाशक्ति की सहायता से निम्न केन्द्रों की गतिशीलता को रोकना पड़ता है।

नित्य साधना और तीव्र संघर्ष के द्वारा उच्चतर केन्द्रों की क्रिया अधिकाधिक स्वाभाविक और कम श्रमसाध्य हो जाएगी, लेकिन इस युद्ध-सम अवस्था से गुजरे बिना इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता। बाधाओं को दूर कर ऊर्जा को उच्चतर दिशा में प्रवाहित कर अभिव्यक्त करने, तथा उच्चतर स्तरों पर सृजनशील करने के लिये देह और मन की सामान्य शुद्धि आवश्यक है। ऊर्जा कार्यरत होगी ही, चाहे निम्न शारीरिक स्तर पर हो या उच्चतर स्तर पर। उसकी अभिव्यक्ति को रोका नहीं जा सकता, लेकिन उसकी दिशा परिवर्तित की जा सकती है और यही साधक का प्रस्तुत कार्य है।

अपनी ऊर्जा को नियन्त्रित करना मात्र पर्याप्त नहीं है, लेकिन उसे उच्चतर दिशा प्रदान करना आना चाहिए। अन्यथा ऊर्जा घूमती रहती है और अधिकाधिक एक वर्तुल सी बन जाती है अथवा वह आसानी से एक निम्नतर दिशा पाकर निम्न केन्द्रों से अभिव्यक्त हो सकती है। हममें बहुत सी शक्ति अभिव्यक्त हुए बिना भरी पड़ी है। सारे शक्ति प्रवाह को रोक देने पर बहुत से लोग जड़वत् हो जाते हैं; अर्थात् वे निम्न केन्द्रों से शक्ति को अभिव्यक्त होने नहीं देते और साथ ही उसे उच्चतर दिशा भी प्रदान नहीं करते। अत: शक्ति अवरुद्ध होकर समस्याएँ पैदा करने लगती है। बहुत से लोग उच्चतर स्तर पर इसका उपयोग करने में असमर्थ होते हैं और निम्न-केन्द्रों के द्वारा ही उपयोग कर सकते हैं। निम्न केन्द्रों से शक्ति के प्रवाह को रोक देने पर वे निष्क्रिय हो जाते हैं अथवा उनकी शक्ति आवर्तित होने लगती है। इसलिए इस निम्न श्रेणी के लोगों को निर्देश देते समय हमें बहुत सावधान होना चाहिए।

कभी दैवी शक्ति के तीव्र वेग का अनुभव होता है, जिसे रोका नहीं जा सकता। पूर्व प्रशिक्षण तथा चित्तशुद्धि के द्वारा हमें इसे संभालने के लिये तैयार रहना चाहिए। बहुत से विभिन्न मनोभाव तथा प्रेरणाएँ हममें उठती हैं, और हमें उच्चतर भावों को विकसित और संवर्धित करना तथा निम्न भावों को दूर करना सीखना चाहिए।

आन्तरिक नियन्त्रण :

सामान्यत: हमारे भीतर कुछ अवचेतन प्रक्रिया

हमारे अनजाने ही चलती रहती है, और हम उसके परिणाम को ही जान पाते हैं। अत: हमें अपने मन की गतिविधियों को नियन्त्रित करने में समर्थ होना चाहिए। हमें अपने भीतर प्रवाहित हो रही ईश्वरीय शक्ति के प्रति सचेत होना तथा उसको अपने भीतर नियन्त्रित करने में समर्थ होना चाहिए। हम बाह्य घटनाओं को नियन्त्रित नहीं कर सकते–कम से कम पूर्ण नियंत्रण तो नहीं कर सकते–लेकिन हम अपने आप पर यथासम्भव नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं।

ग्रह–नक्षत्रों का, पर्यावरण का तथा समग्र बाह्य वातावरण का प्रभाव हम पर पड़ता है, लेकिन यह कोई कारण नहीं कि हम उनसे प्रभावित हो जाएँ। यदि उनका विरोध न कर सको तो तुम्हें उनसे अप्रभावित–सा रहना चाहिए। तब तुम उनके प्रभाव को अनुभव नहीं करोगे और अवाञ्छनीय आवेगों अथवा शक्ति के वेग के उठने पर अपना संतुलन नहीं खोओगे। और अभ्यास के द्वारा हम बिना प्रयत्न के सुरक्षित हो जाते हैं।

यदि तुम मिलनसार होओ और बुरे स्वभाव के लोगों के सम्पर्क में आओ, तो तुम अपने को उनसे अत्यधिक प्रभावित महसूस करोगे, और ऐसी स्थिति में यदि तुम सावधान न रहो और गलत व्यक्ति आये तो वह तुम्हें नीचे खींच लेगा। और यह पतन बाह्य प्रभाव के कारण ही अथवा हमारी अपनी लापरवाही तथा विवेकहीनता के कारण भी हो सकता है। आन्तरिक संतुलन आध्यात्मिक जीवन की सबसे बड़ी समस्या है, और इसके बिना स्थिरता अथवा शान्ति सम्भव नहीं है।

आघातों को परमात्मा की ओर मोड़ो :

यह सारा नैतिक अनुशासन हमें बहुत सहायक होता है। कभी–कभी महान इच्छाशक्ति की सहायता से आन्तरिक संतुलन बनाये रखना पड़ता है। लेकिन यह भी अभ्यास द्वारा अधिकाधिक स्वाभाविक होता जाता है। और उच्चतर ध्यान की मन:स्थिति बनाये रखने के प्रयास से तथा किसी व्यापकतर चेतना के संस्पर्श में रहने से आध्यात्मिक जीवन में यह संतुलन आसान हो जाता है, क्योंकि तब तुम अपने में हो रही प्रतिक्रियाओं को किसी व्यापकतर सत्ता को स्थानान्तरित कर देते हो। तुम्हें आघात लगते हैं, पर तुम किसी और को दे देते हो। अत: परमात्मा एक प्रकार से हमारे ''झटका अवशोषक'' हो जाते हैं।

भक्त इस कार्य को– अपने आघातों को परमात्मा को देने के कार्य को–अपनी भक्ति की सहायता से करते हैं : ''प्रभु यह तुम्हारी इच्छा है; हम क्या करें?'' प्रतिक्रियाओं को कम करने की भक्तों की यह मनोवैज्ञानिक पद्धति है।

ज्ञानी उस अनन्त का चिंतन करने का प्रयत्न करता है, जिसका वह अंश है, और अंश कभी पूर्ण का अतिक्रमण नहीं कर सकता। असीम सदा ससीम की सहायता करने को तत्पर है, क्योंकि इन दोनों को पृथक् नहीं किया जा सकता। बुदबुदे के दृष्टान्त में हम देखते हैं कि सागर यदि बुदबुदे को सभी अवस्थाओं में आश्रय न दे, तो बुदबुदा किसी भी क्षण फूट सकता है। कभी उसे अपना केन्द्र परिवर्तित करना पड़ता है, लेकिन वह सागर पर रहते हुए ही केन्द्र परिवर्तित करता है, और यही हमें करना है।

यदि किसी दिन तुममें भावनाओं का अत्यधिक उद्रेक हो और तुम्हें यह न ज्ञात हो कि इससे कैसे छुटकारा पायें, तो परमात्मा की ओर दौड़ पड़ो; यह भावना तुम्हें परमात्मा तक ले जाये, और यदि तुम रोना चाहो, तो परमात्मा तक पहुँचने की प्रतीक्षा करो। उसके पहले न रुको। यही उपाय है-सभी कुछ परमात्मा को स्थानान्तरित कर देना।

जब तक ससीम असीम के संस्पर्श में आने का प्रयत्न नहीं करता, तब तक समूल शुद्धिकरण नहीं हो सकता। हम सभी कचरा और धूल छुपाते हैं, कभी कभी फूलों के द्वारा उसे आवृत कर देते हैं, लेकिन जब तक हमारे सारे मन की वास्तविक सफाई नहीं होती, तब तक आध्यात्मिक जीवन में कुछ भी नहीं हो सकता। केवल ऊपरी सफाई से काम नहीं चलेगा।

ससीम सदा अपवित्र होता है और वह असीम के संस्पर्श में आने पर ही पवित्र होता है और इस तरह अपने असीम स्वरूप की अनुभूति प्राप्त करता है। ससीमता, अपने स्वभाव की ससीमता ही वास्तविक ''आदिपाप'' है और यह आदिपाप, ससीमता का त्याग करने पर, असीम के, हमारे वास्तविक मूल स्वभाव के संस्पर्श में आने पर ही दूर हो सकता है।

इस एकात्मता की अनुभूति होने पर समग्र जगत् हमारे नेत्रों के समक्ष रूपान्तरित होकर दिखाई देता है। हमारे लिये सब कुछ मंगलमय और शुभ हो जाता है। हृदय की सभी ग्रन्थियाँ और वक्रताएँ नष्ट हो जाती हैं और अनन्त का आनन्द हमारे रोम रोम में व्याप्त हो जाता है। तब हमें उस वैदिक ऋषि का सा अनुभव होता है, जिसने निम्नोक्त मंत्र का गान किया था :

वायु हमारे लिये मधुर है, सागर हम पर मधु-सिंचन कर रहे हैं। औषधियाँ हमारे लिये मधुमय होवें, वनस्पतियाँ मधुमय हों, सूर्य भी हमारे लिये प्रिय हो। दिवा-रात्रि हमारे लिये मधुमान् होवें। पृथ्वी की रज हमारे लिये मधुमय है। ए स्वर्गस्थ पिता, हमारे लिये मधुमान् होओ। गायें हमारे प्रति मधुमति होवें।

पृष्ठ 5 का शेष

चलता रहे मेरा संघ

किया जा रहा है। वैसा ही संघ में हमारे ऊपर प्रभाव पड़ा है। गंभीरता का अभाव है। हमारी हमारे उद्देश्य, हमारे मार्ग आदि के प्रति गंभीरता नहीं है। तभी साथ रहते-रहते भी अपनत्व का अभाव लगता है। हम स्वयं हमारे प्रति गंभीर बनें, उसी के लिये ये विशेष शिविर आयोजित किए गये हैं। लोक संग्रह लोकशिक्षण से होगा। लोक शिक्षण हेतु पात्रता के लिये स्वयं के अन्दर खोजें। खोजेंगे तो हमारे अभावों का पता चलेगा। पता लगाएँ और विकृति को दूर करें तो शुद्धता आएगी। अन्त:करण की शुद्धि होगी, तभी परमेश्वर की प्राप्ति होगी। अन्त:दर्शन या तो सद्गुरु करवाता है या संघ करवा सकता है।

हमारी गंभीरता बढती जाएगी तो अन्त:स्थल की फुलवारी खिल उठेगी। किसी भी स्वयंसेवक के जीवन को देखें तो संघ नजर आ जाए। ऐसी एकरूपता बना लेना ही समत्व जीवन है, ईश्वर की ओर बढना है। छोटे-छोटे संकल्प लेकर इसे प्राप्त करना है। शाखा में हमारे बीच कोई क्लेश नहीं होता तो फिर जीवन में क्लेश क्यों आए। शाखा में जो सीखते हैं वह हमारे घरों में जाए, अन्यथा अधूरापन है। शाखा में सीखा, उसको जीवन के हर क्षेत्र में लाना है। आप विशेष शिविर करके जा रहे हैं, लोग आप में विशेपता ढूंढेंगे, वह विशेपता आपको बनानी है। कल का संघ आपके हाथों में होगा। उसके लिये नई टीम को महत्त्वपूर्ण कार्य लेने हैं। कोई भी काम आपको दिया जा सकता है, उसकी तैयारी कर लें। जो बताया जा रहा है, उसे करते जाएँ, सब कुछ संभव हो जाएगा।

पृष्ठ 7 का शेष

दुर्गादास

व मर्यादा-युक्त हैं। आखिर औरंगजेब को उसी सिपाही से जमानत देने की प्रार्थना करनी पड़ी। धन्य है दुर्गादास का व्यक्ति-परखने का गुण।

औरंगजेब की पौत्री सफियत्तुन्निसा से अजीतसिंह शादी करना चाहते थे, लेकिन राजनीतिज्ञता एवं क्षत्रिय वंश को अशुद्ध न होने देने के कारण दुर्गादासजी ने यह प्रकरण समाप्त करने हेतु सफियत्तुन्निसा को औरंगजेबे को लौटा कर बदले में अजीतसिंह को राज्याधिकार दिलवाया। इस विफल प्रेम प्रसंग ने अजीतसिंह के मन में श्री दुर्गादासजी के प्रति विद्वेष का भाव भर दिया जिसकी परिणति उनके देश-निष्कासन से हुई। क्षीप्रा नदी के किनारे, महाकालेश्वर के उज्जैन नगर में वीर दुर्गादास ने चिर निद्रा ली।

उच्च सिंहासन न मुझे बताना।
स्वर्ग का चाहे न द्वार दिखाना।।
जाति की फुलवारी में पुष्प बनाना।
ताकि मैं सौरभ से जग को रिझाऊँ।।

अब निर्णय आपको करना है कि दुर्गादासजी की जयन्ती मनायें या नहीं।

प्रेरक कथानक

– संकलित

एक ब्राह्मण देवता राजकीय पुरोहित थे, घोर जंगल में राज्य की वरिष्ठ पाठशाला के आचार्य थे। उस युग की मान्यता के अनुसार पाठशाला जन-कोलाहल से दूर निर्जन एकान्त में होती थी, जिससे छात्रों पर संग-दोष का कुप्रभाव न पड़ सके।

राजकन्या युवा हो चली थी। विवाह-हेतु आवश्यक निर्देश के लिये पुरोहित को दरबार में बुलाया गया। राजा ने पुत्री से प्रणाम कराते हुए उसके भाग्य एवं विवाह-व्यवस्था के संदर्भ में पुरोहित से जानना चाहा। कन्या के शुभ लक्षणों एवं सौंदर्य को देखते ही पुरोहित की विवेक-बुद्धि असन्तुलित हो गई। उसने अपने चेहरे को उदास बनाते हुए शुष्क शब्दों में कहा-''राजन्! खेद है कि यह कन्या इस आयु के पश्चात् जहाँ जायेगी, वहाँ सर्वनाश हो जाएगा और यदि यहाँ रहेगी तो यहाँ भी सर्वनाश निश्चित है; रेखायें कुछ ऐसा ही कहती हैं। इस कुयोग के निवारण का एकमात्र उपाय है कि तैरने वाले ठोस सन्दूक में वायु इत्यादि की व्यवस्था करके सोलहों श्रृंगार करके कन्या को नदी में प्रवाहित कर दें। यदि कोई इसे पाएगा तो उसके लिये कन्या का अनिष्टकारी प्रभाव टल जाएगा। वह चक्रवर्ती सम्राट होगा और यही उसकी पटरानी होगी।''

राजा ने बहुत विचार के पश्चात् निश्चित किया कि यदि गाँव के कारण देश का नाश हो तो गाँव का तथा व्यक्ति के कारण कुटुम्ब का नाश हो तो व्यक्ति का परित्याग कर देना चाहिए; अत: व्यथित हृदय से पण्डितजी की बात को मान लिया। पुरोहित ने अपनी देखरेख में ही कन्या को सन्दूक में बन्द कराया, कन्या के कल्याण के लिये उसे नदी में प्रवाहित कराया और राजा को आशीर्वाद देकर दौड़ते-भागते अपने विद्यालय पहुँचे। शिष्यों को उन्होंने एकत्र किया और कहा-''बच्चो! आज पाठशाला में छुट्टी! देखो, एक सन्दूक नदी में तैरता आ रहा है। तुम सब नदी के किनारे उसकी प्रतीक्षा करो। उसे निकालकर इस कोठरी में बन्द करके बाहर से ताला लगा देना। कोई शोरगुल हो तब भी दरवाजा न खोलना- यह मेरा आदेश है। मैं भी कहूँ, तब भी न खोलना।'' गुरुभक्त शिष्यों ने 'आज्ञा शिरोधार्य' कहकर नदी-तट पर सन्दूक की प्रतीक्षा करना आरम्भ किया।

बहते हुए उस सन्दूक को एक शिकारी राजकुमार ने देखा। शिकार से श्रान्त-क्लान्त होकर नदी-तट पर वह विश्राम कर रहा था, घोड़ों को पानी पिला रहा था। कुतूहलवश उसने सिपाहियों को आदेश दिया और सिपाही बात की बात में उस सन्दूक को किनारे लाये। सन्दूक खोलते ही अनिंद्य सुन्दरी राजकन्या निकल पड़ी। राजकुमार को बड़ा अचम्भा हुआ और उस कन्या का परिचय जानने के लिये अधीर हो उठा। राजकुमारी ने अपनी सारी गाथा कह सुनायी। वृत्तान्त सुनने के पश्चात् राजकुमार ने प्रश्न किया कि अब तुम्हारी कहाँ जाने की इच्छा है? राजकुमारी ने कहा, ''घर से निकल जाने के पश्चात् अब मेरा है ही कौन? अब तो संसार में मेरे एकमात्र आश्रय आप ही हैं।'' कन्या की समर्पण भावना का समादर करते हुए राजकुमार ने जंगल में ही उससे विधिवत विवाह किया। शिकार में पकड़े गये जीवित भालू को उसी बन्दूक में बन्द कर, यथावत् प्रवाहित कर सपत्नीक स्वदेश लौट गया।

तैरता हुआ वह सन्दूक जब पाठशाला के समीप पहुँचा तो बच्चों ने उसे निकाला और गुरुजी के आदेशानुसार उसे कोठरी में बन्द करके ताला लगा दिया। गुरुजी मंत्र पढ़ते हुए गये, कमरे का ताला खोला और कमरा बन्द किया। पण्डितजी ने धड़कते हृदय से ज्यों ही सन्दूक खोला त्यों ही भूखा-प्यासा, सताया हुआ भालू उन पर झपट पड़ा। पण्डितजी ने उससे मुक्त होने का प्रयास किया, बच्चों से दरवाजा खोलने के लिये आदेशों का ताँता लगा दिया किन्तु गुरुभक्त शिष्यों ने कोई ध्यान न दिया।

(शेष पृष्ठ 17 पर)

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

सामान्य राजपूत के आजीविका का साधन उनकी वह पुश्तैनी भूमि थी जिसे जोतकर, उस पर मेहनत, मजदूरी करके अपना भी पेट भरता व अपने परिवार का भी भरण-पोषण करता था। जब आजाद भारत में तत्कालीन सरकार ने भूमि सुधार के नाम पर उनकी आजीविका का सहारा उनकी उस पैतृक भूमि को उनसे छीनने की मुहिम छेड़ी तो इस अत्याचार व अन्याय के विरुद्ध राजपूत कौम में उग्र प्रतिक्रिया हुई। इस उग्र प्रतिक्रिया के फलस्वरूप राजस्थान में भूस्वामी आंदोलन शुरू हुआ।

राजपूत कौम अनुशासित कौम है। इस कौम ने आज तक अपने हक की जो भी लड़ाई लड़ी है, अनुशासन में रहकर लड़ी है और इस आंदोलन की बागडोर तो श्री क्षत्रिय युवक संघ के हाथ में थी जो अनुशासित व संस्कारित लोगों का संघ है। भूस्वामी आंदोलन को सुचारू रूप से व अनुशासित ढंग से चलाने के लिये तत्कालीन संघप्रमुखश्री आयुवानसिंहजी के निर्देशन में एक कार्यकारिणी का गठन किया जिसमें श्री मदनसिंहजी दांता अध्यक्ष, पूज्य श्री तनसिंहजी महामंत्री, श्री रघुवीरसिंहजी जावली संगठन मंत्री और श्री शिवचरणसिंहजी निम्बाहेड़ा उपाध्यक्ष थे।

राजस्थान के राजा-महाराजा व अधिकांश बड़े जागीरदार इस भूस्वामी आंदोलन में निष्क्रिय रहे। अपनी ही जाति के साथ हो रहे अत्याचार व अन्याय को वे मूक दर्शक बनकर देखते रहे। उनकी यह तटस्थता इस बात का जीता-जागता सबूत है कि आपसी सहयोग की और सामूहिक जीवन जीने की जो भावना कभी हमारे भीतर हुआ करती थी, अब वो उनमें प्राय: लुप्त हो चुकी थी। एकमात्र सामान्य राजपूतों में ही तत्कालीन सरकार के रवैये के विरुद्ध आक्रोश था। उन्होंने एकजुट होकर संघर्ष किया। राजस्थान के हर घर व हर गाँव के राजपूतों ने इस आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। इस आन्दोलन में हजारों लोगों ने गिरफ्तारियाँ दी और हजारों जेल में गये। तत्कालीन सरकार ने इस आंदोलन को दबाने के लिये हर तरीका अपना कर जितना प्रयास किया, उतना ही आन्दोलन अधिक तेज होता चला गया।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के ग्रीष्मकालीन उच्च प्रशिक्षण शिविर सन् 1955 के तुरन्त बाद एक जून, 1955 से इस भूस्वामी आंदोलन की शुरुवात हुई। जयपुर में बड़ी चौपड़ पर एक विशाल आम सभा का आयोजन किया गया जिसमें राजस्थान के कोने-कोने से राजपूत आकर इस विशाल आम सभा में सम्मिलित हुए। श्री क्षत्रिय युवक संघ के तत्कालीन संघप्रमुखश्री आयुवानसिंहजी व अन्य वक्ताओं ने सरकार के इस अनीतिपूर्ण रवैये के विरुद्ध आम सभा में बोलते हुए सरकार को चेताया ही नहीं, बल्कि खुली चुनौती दी और राजपूतों को इस अन्याय के विरुद्ध संगठित होकर अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करने का आह्वान किया। स्वामी करपात्रीजी ने इस भूस्वामी आंदोलन को राजपूतों के लिये एक धर्म युद्ध बताया। राजस्थान के अलावा भारतवर्ष के अन्य राज्यों के राजपूतों, चाहे वे किसी भी राजनैतिक दल में क्यों न हों, उन्होंने भी इस भूस्वामी आंदोलन का समर्थन किया। गुजरात राज्य के सामाजिक नेता श्री हरीसिंहजी भाई गढुला के नेतृत्व में जयपुर भी आये और इन्होंने इस आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभायी। इस आंदोलन के सूत्रधार श्री क्षत्रिय युवक संघ से वे इतने प्रभावित हुए कि अपने गुजरात राज्य में भी इसे शुरू करने की उनमें प्रबल इच्छा जागृत हुई। संघ आज गुजरात में जिस कदर फैला है इसके पीछे पूज्य श्री हरीसिंहजी भाई गढुला का अथक प्रयास ही रहा।

भूस्वामी आंदोलन सामान्य राजपूत वर्ग की देन थी। इस वर्ग ने ही इसे गति दी, इसमें जान फूंकी। अमीर

घराने (राजा-महाराजा व बड़े जागीरदार) का तो इस आंदोलन से लगभग कोई लेना-देना व वास्ता नहीं था, वे तो इस आंदोलन में निष्क्रिय बने रहे, अपनों के प्रति हमदर्दी उनके दिल व दिमाग से लुप्त हो चुकी थी। अपनों ने तो मुँह मोड़ा ही, साथ में राजपूतों से समर्थित भारतीय जन संघ ने भी विरोधी रुख अख्त्यार कर हमसे दूरी बना ली, हमसे किनारा कर लिया। इस आंदोलन में एकमात्र सामान्य राजपूत वर्ग जो कृषि से जुड़े थे, एकजुट होकर संघर्ष कर रहे थे।

सरकार नहीं चाहती थी कि यह आंदोलन सफल हो इसलिये बिचौलियों के मार्फत बातचीत व आश्वासनों का दौर चला। राज्य सरकार व केन्द्रीय सरकार के आश्वासन व आपसी बातचीत से 57 दिन बाद 27 जुलाई, 1955 को यह आंदोलन वापस ले लिया गया। आन्दोलन वापस लेने के तत्काल बाद समस्त सत्याग्रही बन्दियों को जेल से रिहा कर दिया गया और जो नेतागण जेल में थे उनके भी रिहाई के आदेश हो गये।

राज्य सरकार व केन्द्र सरकार ने आश्वासन तो दिये पर कुछ करने की बजाय इसमें शिथिलता बरतती गई। सरकार को कुछ न करने की स्थिति में देख भूस्वामी संघ के वरिष्ठ नेताओं को समझ में आ गया कि सरकार का आश्वासन केवल छलावा व धोखा था। सरकार की नियत में ही खोट है। वह कुछ नहीं करना चाहती। आंदोलन को समाप्त करने के लिये उसने झूठ का सहारा लिया।

भूस्वामी संघ की कार्यकारिणी ने तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पूरे मसले का आंकलन किया और पूरी स्थिति का जायजा लेकर पुन: आंदोलन आरम्भ करने में जुट गयी। आंदोलन शुरू करने के प्रयासों में राजस्थान में तो गाँव-गाँव ही क्या, हर घर, हर ढाणी सम्पर्क किया जाने लगा। आंदोलन की भूमिका में जगह-जगह घूमकर लोगों से व्यक्तिगत सम्पर्क व जन सभाओं द्वारा सम्पर्क किया जाने लगा। राजस्थान से बाहर भारत के अन्य राज्यों में राजपूत नेताओं से पूज्य श्री तनसिंहजी, श्री क्षत्रिय युवक संघ के तत्कालीन संघप्रमुखश्री आयुवानसिंहजी व भूस्वामी संघ की कार्यकारिणी के अन्य वरिष्ठ नेता लोग तथा आंदोलनरत अन्य प्रभावशाली वरिष्ठ नेता लोग सम्पर्क साधने लगे।

श्री क्षत्रिय युवक संघ की इस आंदोलन में अहम भूमिका रही। श्री क्षत्रिय युवक संघ के स्वयंसेवकों ने रात-दिन कड़ी मेहनत कर भूस्वामी आंदोलन को दूसरी बार प्रारम्भ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। संघ के स्वयंसेवकों ने सोये समाज को जागृत किया जिसकी बदौलत समाज के बहुत सारे कर्मठ लोग इस आंदोलन में लामबद्ध हुए और 19 दिसम्बर, 1955 को भूस्वामी आंदोलन दूसरी बार पूरे जोश व होश में आरम्भ हो गया।

गुजरात के राजपूत नेता तो शुरू से ही इस आंदोलन के समर्थन में थे। अबकी बार उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश आदि प्रदेशों से भी राजपूतों के प्रतिनिधि आंदोलन को समर्थन देने आये। इस आंदोलन में हजारों राजपूत पुन: जेलों में गये। राजस्थान की सारी जेलें भर गई।

रामराज्य परिषद के अलावा सारे राजनैतिक दल इस आंदोलन में राजपूतों से दूरी बनाये ही रहे। वे तटस्थ रूप से मूकदर्शक बन सब कुछ देखते रहे। एकमात्र रामराज्य परिषद ने इस आंदेलन में खुलकर साथ दिया।

इस आंदोलन के महारथी बड़े नेता पूज्य श्री तनसिंहजी व तत्कालीन संघप्रमुखश्री आयुवानसिंहजी को गिरफ्तार कर सरकार इस आंदोलन को कुचलना चाहती थी पर राज्य पुलिस व गुप्तचर विभाग अपना पूरा जोर लगाने पर भी उन्हें गिरफ्तार करने में कामयाब नहीं हुए। वे भूमिगत रहकर आंदोलन का संचालन सफलतापूर्वक करते रहे।

पुलिस व गुप्तचर विभाग की किरकिरी हो रही थी। पुलिस हर कीमत पर उन्हें गिरफ्तार करना चाहती थी इसलिये उन्होंने उन्हें गिरफ्तार करने के लिये अपना जाल बिछाया। शहर की घेराबन्दी कर रखी थी। पग-पग पर गुप्तचर लगा रखे थे जो सक्रिय तौर पर वे कहाँ-कब आते-जाते रहते हैं, उनकी खोज खबर लेने व उनके

(शेष पृष्ठ 17 पर)

महाभारत में क्षात्रधर्म

– संकलित

धर्म क्या है?

धारणात् धर्म इत्याहु

मानव जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिये जिन नियमों को वह जीवन में धारण करता है, उसे धर्म कहते हैं।

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्मः –कणाद

जिससे मानव के अभ्युदय और कल्याण की सिद्धि हो, उसे धर्म कहते हैं।

क्षत्रिय कौन है?

1. जिसका पौरुष अपने 'स्व' की रक्षा करता हुआ दूसरों के हितों की भी रक्षा करे, उसे- ***क्षतात त्रायते इति क्षत्रिय*** कहते हैं।

माता कुन्ती युद्धिष्ठिर को श्रीकृष्ण द्वारा संदेश भेजते हुए कहती है–

'तुम तो क्षति से त्राण देने वाले क्षत्रिय हो। तुम्हें तो बाहुबल से जीविका चलानी चाहिए।'

महा–उपा. पर्व 130/29

2. ***क्षरते इति क्षत्रम्*** – द्रोपदी। वन पर्व 28/34

जो दुष्टों का नाश करता है, वही क्षत्रिय है।

3. 'जो संकट से अपना तथा दूसरों का त्राण करता है। युद्ध में शत्रु को क्षति पहुँचाना ही जिसकी जीविका है तथा जो स्त्रियों और सज्जनों पर क्षमाभाव रखता है–वही क्षत्रिय है और उसे ही इस धरा पर राज्य, धर्म, यश और लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।'

4. युद्धिष्ठिर ने दुर्योधन को उलूक द्वारा संदेश भेजते हुए कहा–'जो किसी से भयभीत न होकर अपने वचनों का पालन करता है और अपने ही बाहुबल से पराक्रम प्रकट करके शत्रुओं को युद्ध हेतु बुलाता है–वही क्षत्रिय पुरुष है।

5. कुन्ती ने युद्धिष्ठिर को कहा–'हे पुत्र! ब्रह्माजी ने तुम्हारे लिये जिस धर्म की सृष्टि की है, उसी पर दृष्टिपात करो। उन्होंने अपनी भुजाओं से क्षत्रिय को उत्पन्न किया है। अतः क्षत्रिय बाहुबल से ही जीविका चलाने वाले होते हैं। उ.प. 130/6

गीतोक्त क्षात्रधर्म :

प्रत्येक मनुष्य अपने–अपने स्वाभाविक धर्म से बंधा हुआ होता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन सबके कर्म स्वभाव से उत्पन्न गुणों द्वारा विभक्त किए गये हैं।

क्षत्रिय के स्वभाव से उत्पन्न (गुणों द्वारा) कर्म–

1. शौर्य (शूरवीरता) :– बलवान शत्रु का न्याय युक्त सामना करने में भय न करना और न्याय युक्त युद्ध करने के लिये सदा ही उत्साहित रहना और युद्ध के समय साहस पूर्वक गंभीरता से लड़ते रहना ही शूरवीरता है।

2. तेज :– जिस शक्ति के प्रभाव से मनुष्य दूसरों का दबाव मानकर किसी भी कर्तव्य पालन से कभी विमुख नहीं होता और दूसरे लोग न्याय और उसके प्रतिकूल व्यवहार करने में डरते रहते हैं, उस शक्ति का नाम तेज है। इसी को प्रताप और प्रभाव भी कहते हैं।

3. धैर्य :– बड़े से बड़े संकट के उपस्थित हो जाने पर, युद्ध स्थल में भारी चोट आने पर, पुत्रादि के मरने पर, सर्वस्व का नाश हो जाने पर भी व्याकुल न होना और अपने कर्तव्य पालन से कभी विचलित न होकर न्यायानुकूल कर्तव्य पालन में संलग्न रहना–इसी का नाम धैर्य है।

4. दक्षता (चतुराई) :– परस्पर झगड़ा करने वालों का न्याय करने में अपने कर्तव्य का निर्णय और पालन करने में, युद्ध करने में, तथा मित्र–शत्रु और मध्यस्थों के साथ यथायोग्य व्यवहार करने में जो कुशलता है, उसी का नाम दक्षता है।

5. युद्ध में पलायन न करना :– भारी से भारी संकट के उपस्थित होने पर भी पीठ न दिखाना, संघर्ष से च्युत न होना।

6. दान :- उपयुक्त व्यक्तियों को धन और वस्तुओं का दान देना।

7. ईश्वरभाव :- प्रजा का पुत्रवत पालन करना।

ये सभी क्षत्रिय की स्वाभाविक प्रवृतियाँ और स्वाभाविक गुण हैं। स्वाभाविक कर्म हैं।

क्षात्रधर्म की श्रेष्ठता :- श्रीकृष्ण जब जरासंघ का वध करने गए तब जरासंघ ने कहा,-जो क्षत्रिय लोक के विरुद्ध आचरण करके निरपराध के लिये धन और धर्म के नाश का दोषारोपण करता है, वह कष्टमयी गति को प्राप्त होता है और कल्याण से वंचित हो जाता है। त्रिलोकी में सत्कर्म करने वाले क्षत्रियों के लिये क्षात्रधर्म ही श्रेष्ठ है। धर्मज्ञ पुरुष क्षत्रिय के लिये अन्य धर्म की प्रशंसा नहीं करते।

भीष्म ने युद्धिष्ठिर से कहा :- राजधर्म भुजाओं के आश्रित है। वह क्षत्रिय के लिये संसार में सर्वश्रेष्ठ धर्म है क्योंकि इस धर्म का सेवन करता हुआ क्षत्रिय मानव मात्र की रक्षा करता है। क्षात्रधर्म के लुप्त होने पर सभी धर्मों का लोप हो जाता है। आदिदेव विष्णु के द्वारा सर्वप्रथम क्षात्रधर्म का ही प्रवर्तन किया गया। अन्य सब धर्म तदन्तर प्रवृत हुए। वस्तुत: क्षात्रधर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। भगवान विष्णु ने देवताओं की रक्षा के लिये क्षात्रधर्म का ही पालन किया। इस भाँति संसार में क्षात्रधर्म ही सब धर्मों में श्रेष्ठ, सनातन, नित्य, अविनाशी और मोक्ष तक पहुँचाने वाला सर्वतोमुखी धर्म है।

*

पृष्ठ 13 का शेष

प्रेरक कथानक

क्रमश: पण्डितजी का स्वर धीमा पड़ने लगा। भागदौड़ में पण्डितजी के हाथ एक खड़िया आ गयी। शिष्यों के उपदेशार्थ उन्होंने यह श्लोक लिखा –

मम इच्छा दैव नास्ति, दैव इच्छा परबलम्।
राजद्वारे राजकन्या, विप्र भालू भच्छतम्।।

अर्थात् मेरी इच्छा उस कन्या को प्राप्त करने की हो गई थी किन्तु दैव की वैसी इच्छा न थी। दैव की इच्छा प्रबल होती है। हस्तरेखा के अनुसार कन्या राजरानी बनकर किसी राजप्रसाद में पहुँच गई किन्तु मुझ विप्र को भालू खा गया।

भावी ही भालू है। भावी, होनी गति, दैव, संचित, प्रारब्ध, भाग्य, ललाट रेखा तथा संयोग प्राय: समानार्थक एवं एक दूसरे के पर्याय ही हैं। इसी को कबीरदासजी ने व्यक्त किया है–

करम गति टारे नाहिं टरी।
मुनि वशिष्ठ से पंडित ज्ञानी, शोधि के लगन धरी।।
सीता हरन मरन दसरथ को, बन में विपति परी।।

पृष्ठ 15 का शेष

पूज्य श्री तनसिंहजी ..

छिपने की जगहों की छानबीन करने में लगी हुई थी। पुलिस अपनी गतिविधियों को अति गोपनीय ढंग से इंतजाम दे रही थी।

पुलिस की गिरफ्तारी से बचने के लिये पूज्य श्री तनसिंहजी दिन में तो पहाड़ी क्षेत्र की कन्दराओं व घाटियों में और रात्रि में ग्रामीण क्षेत्रों में आर.जे.सी. 116 जीप के जरिये घूमकर लोगों से व्यक्तिगत सम्पर्क कर उन्हें प्रेरित कर रहे थे।

एक बार पुलिस विभाग की पूज्य श्री की जीप पर नजर पड़ गयी। जैसलमेर जाने वाली सड़क पर पुलिस विभाग ने अपने वाहनों से पूज्य श्री की जीप को घेरने का प्रयास किया पर पूज्य श्री ने बड़ी चतुराई से अपनी जीप को द्रुत गति से दौड़ा कर उसी सड़क पर जालीपा की ओर निकल गये। जालीपा ग्राम में जीप को कहीं कांटों में छिपाकर पुलिस की नजरों से ओझल हो गये। पुलिस विभाग अपनी विफलता की हताशा में हाथ मलते ही रह गया।

गिरफतारी न होने पर राज्य सरकार की हताशा भी बढ गयी। राज्य सरकार के निर्देश पर अब पेट्रोल पम्प सघन निगरानी में थे। जीप तक तेल की आपूर्ति के लिये स्वयंसेवकों ने एक प्लानिंग बनाई। स्वयंसेवक मिट्टी के घड़ों में पेट्रोल भर कर जीप तक पहुँचाते थे और देखने वाले लोगों में यह भ्रम पैदा किया कि घड़ों में पानी ले जा रहे हैं। पूज्य श्री की चतुराई, तत्परता व सोच से पुलिस विभाग अचंभित था। ***(क्रमश:)***

करना और होना

– कृपाकांक्षी

अंग्रेजी के दो शब्द हैं 'डूइंग' और 'हैपनिंग'। डूइंग का अर्थ है करना और हैपनिंग का अर्थ है होना। व्यक्ति शुरुआत करने से करता है। जब तक करना होता है तब तक व्यक्ति काम के साथ स्वयं को जोड़े रखता है, काम की सफलता या असफलता उसे प्रभावित करती है। करने में स्वयं का अहंकार पोषित होता है। स्वयं के अस्तित्व का बोध रहता है। मैं कर रहा हूँ ऐसा भान होता है। यही भान सफल होने पर प्रसन्न करता है और असफल होने पर निराश करता है। अपेक्षित परिणाम होने पर यह करना अहंकार को पोषित करता है और अपेक्षित न होने पर यह अहंकार पर चोट पहुँचाता है। इस प्रकार करना (डूइंग) अहंकार से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखता है।

होना में स्वीकारोक्ति का भाव है। जो हुआ, जैसा हुआ उसकी सहज स्वीकृति को होना माना जाना चाहिए। जिसके अंतर में होना घटित होने लगता है, फिर उसे प्रसन्नता या निराशा से अथवा सफलता या असफलता से कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इस प्रकार होना करने से आगे की स्थिति है। निश्चित ही होना श्रेष्ठ स्थिति है। सुख-दुख से ऊपर उठने की स्थिति है। व्यक्तिगत अहंकार के विलगित होकर विराट की योजना के अनुसार संचालित होने की स्थिति है, लेकिन यहाँ यह जानना जरूरी है कि करने के बिना होना की स्थिति प्राप्त करना सरल नहीं है। पहले करना घटित होता है और करते-करते ही अहसास होता है कि करने से इच्छानुकूल कुछ होता नहीं है बल्कि जो होना होता है, वही होता है।

हमारी साधना का प्रारम्भ 'मैं भी कुछ करूं' से होता है। श्रद्धेय आयुवानसिंहजी की प्रसिद्ध एवं संघ के साधना मार्ग पर आरूढ होने वाले नये साधक की मार्गदर्शक पुस्तक 'मेरी साधना' के प्रारम्भिक अवतरण इसी अहसास का संदेश देते हैं कि मैं भी कुछ करूँ। व्यक्ति जब 'मैं भी कुछ करूँ' के भाव के साथ करना प्रारम्भ करता है तो करते-करते उसे आभास होता है कि कई बार अनपेक्षित परिणाम आते हैं। जितना उसने किया उससे अधिक परिणाम आ जाते हैं या जितना उसने किया उससे बहुत न्यून परिणाम आते हैं लेकिन फिर भी वह सांघिक प्रेरणा से करना नहीं छोड़ता। लगातार कर्मशील रहता है और यही कर्मशीलता कालांतर में उसमें समर्पण जागृत करती है। स्वीकारोक्ति का भाव जागृत करती है। यहीं से करना होने में बदलने लगता है। व्यक्तिगत अहंकार समष्टिगत अहंकार में समाहित होने लगता है, समष्टिगत अहंकार भी साक्षी भाव की ओर प्रवाहित होने लगता है और फिर उद्‌गार यही निकलने लगता है कि भगवान करेंगे वह अच्छा ही करेंगे। गुरु महाराज सब ठीक करेंगे। क्योंकि इस स्थिति में करने वाला शेष नहीं रहता बल्कि होने को स्वीकारने वाला ही शेष रहता है। हम हमारे आस-पास की स्थितियों का गहराई से विश्लेषण करेंगे तो ऐसा महसूस भी करेंगे लेकिन यह ध्यान रखें कि होने की यह स्थिति करने से होकर ही गुजरती है। करने का अनुभव ही होने की स्वीकृति को दृढ करता है।

जिनके जीवन में हमें होना दिखाई दे रहा है, उनके पूर्ववर्ती जीवन को देखें तो उसमें करना भी उतनी ही गहराई के साथ था जितनी गहराई आज होने की दिखाई दे रही है। प्रारम्भ में अपमान और ठोकर की अग्नि को खूं की नदी से बुझाने वाला साधक, दानवता की अग्नि की दावा से धर्म को बचाने आगे कदम बढाने वाला साधक, ज्ञान का आलोक करने वाला, शक्ति से नदियों को रोकने वाला एवं पर्वत के दो टूक करने वाला साधक अंत में कहने लगता है-***सूत्र तेरा, नृत्य मेरा, यंत्री तू मैं यंत्र तेरा; मैं तो तेरा ही सदा हूँ, जीत दो या फिर हरा लो।*** या फिर वह कहने लगता है-***लाज है किसकी तेरी या मेरी, जीत भी किसकी मेरी या***

तेरी; काम भी तेरा मैं भी हूँ तेरा, मैं हूँ लहर तू मेरा किनारा।

इस प्रकार करने से होने तक एक निश्चित प्रक्रिया है। यहाँ कोई भी करने को बीच में छोड़कर होने तक नहीं पहुँचा, लेकिन जिसने करना जारी रखा, उसके जीवन में होना घटित हो गया और वह हम सबका आदर्श बन गया। इसलिए आयें उस परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह हमारे पर अपनी कृपा बनाए रखें ताकि हमारा करना तब तक जारी रहे जब तक कि होना घटित नहीं हो। वह हमें इस मार्ग पर बनाए रखें जहाँ करना ही कालान्तर में होना होकर परमेश्वर की कृपा के यथारूप स्वीकार करने की क्षमताएँ हमने हमारे आगे चलने वालों के जीवन में महसूस की है।

✲

सामान्य ज्ञान व नैतिक आचरण

– आचार्य कनकनन्दी

__सामान्य ज्ञान__ को तुच्छ माना न करो, __प्राणवायु सम__ उसे ग्रहण करो।
जिससे __जीवन क्रियान्वत__ होगा सही, नैतिक आचरण भी बनेगा सही।
__जीवन जीने की कला__ इससे आती, दैनिक क्रियाएँ सुचारू चलती।
सोना-जागना व खाना-पीनादि क्रिया, चलना-बोलना लेना-देनादि क्रिया।।
हित-मित स्वास्थ्यकर अहिंसक __भोजन,__ हित-मित-प्रिय सत्य-तथ्य __वचन।__
अनुशासित शालीन स्व-पर हितकर हो __काम,__ आलस्य प्रमाद रहित पावन __मन।।__
अनावश्यक समय शक्ति का न हो __अपव्यय,__ धन-जन-साधन का हो __सदुपयोग।__
दूषण-प्रदूषण रिक्त हो भाव व स्थान, व्यस्थित सादा-सीधा-शान्त जीवन।।
एकाग्रचित्त से सुनें हितकर __वचन,__ सुनकर मनन करें तथा __आचरण।__
निन्दा चुगली वाद-विवाद मुक्त जीवन, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-तृष्णा रिक्त पावन।।
दया-सेवा-परोपकार युक्त हो __मन,__ नीति-नियम-सदाचार युक्त हो काम।
हिताहित विवेक से करें सही निर्णय, सत्य-तथ्य-उदार युत सही वर्णन।।
सत्य-समता-सहिष्णु भाव ही धरो, अनावश्यक अयोग्य काम न करो।
समयोचित सन्तुलित काम ही करो, ढोंग-पाखण्ड-आडम्बर-द्वन्द्व न करो।।
बिना बुलाये न जाये अन्य के घर, खट खट आवाज न करे अन्य के द्वार।
सकारण शालीनता से ही आह्वान करें, अनुमति बिना (अन्य) कुछ न ग्रहण करें।।
सज्जन अतिथियों के लिये स्वागत लिखें/(करें),
दुष्ट-दुर्जन (पापियों के लिये __निर्गत__ लिखें/(करें)।
यथायोग्य मैत्री प्रमोद समता दया विचारें
द्रव्य क्षेत्र काल भाव अनुसार आचरें।।
अयोग्य हेतु 'नहीं'/(नास्ति) का प्रयोग करें, सन्मति सहित ही 'सहमत' आचरें।
भेड़-भेड़िया-बक सम नहीं आचरें, स्वावलम्बी अनुशासी भाव व्यवहार करें।।
स्वयं हेतु अन्य से अहित न आचरें, अन्य से जो चाहते वह स्वयं भी करें।
दीप बनकर स्व-पर ही प्रकाशी बनो, आदर्श बनाने पूर्व स्वयं आदर्श हो।।
गलती से शिक्षा लेकर आगे ही बढ़ो, काम करो अनुभव से विकास करो।
आत्मविश्वासी ध्येयनिष्ठ पुरुषार्थी बनो, सामान्य से असामान्य 'कनक' बनो।।

राजर्षि जनक-एक दार्शनिक राजा-एक आध्यात्मिक शासक

- स्वामी गोपालआनन्द बाबा

1. मिथिला नरेश महाराजा जनक 'विदेह' एक बार अध्यात्म चर्चा में तल्लीन थे, तभी एक दरबारी ने घबड़ाहट के साथ सूचित किया कि मिथिला नगरी जल रही है। घोर आपदा की इस नाजुक घड़ी में भी महाराजा जनक ने सानन्द प्रतिक्रिया व्यक्त की-''मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति कश्चन'' मिथिला नगरी जल रही है तो इसमें मेरा क्या जल रहा है? और तुरन्त ही अग्नि से नगर को बचाने के लिये सारी शक्ति लगाने का आदेश सजगता पूर्वक दिया।

2. इस आत्मज्ञानी राजा ने मन और इन्द्रियों पर काबू पा रखा था। अपना नाम, वंश, राज और यश को नेपथ्य में डालकर इस वीतरागी महामानव ने अद्वितीय दार्शनिक राजा और आध्यात्मिक शासक सहित राजत्व का आदर्श दुनिया के समक्ष रखा। महाराज जनक के योग-संस्कार परम्परागत थे। इस सत्यान्वेषी नरेश की ठाट-बाट और वैभव से पूर्ण अनासक्ति थी। वे शरीर रहते भी विदेह थे।

3. भारतीय संस्कृत वाङ्मय से ज्ञात होता है कि मिथिला पर अनेकों जनक ने राज किया। इससे विदित होता है कि 'जनक' पदवी वाचक अथवा 'उपाधि वाचक' संज्ञा थी जो मिथिला अथवा विदेह के शासक के लिये रूढ़ की गई थी, यानि विरुद थी। बौद्ध ग्रन्थों में 17 नामावली में जनक लिखा मिलता है। पुराणों के अनुसार 54 जनक हुए हैं। मिथिला अथवा विदेह राज्य पूरब से पश्चिम 24 योजन (400 कि.मी.) और उत्तर से दक्षिण 16 योजना (320 कि.मी.) में विस्तृत थी। काशी और गण्डकी के बीच अवस्थित थी। इतिहासकार मानते हैं कि वर्तमान उत्तर बिहार यानि गंगा के उत्तर व नेपाल की तराई सहित दक्षिण तथा चम्पारण्य, सारङ्गअरण्य (तीरभुक्ति-तिरहुत) से उत्तरी बंग की सीमा तक (पूर्वी सीमा-कोसी और पश्चिमी सीमा गण्डकी)-यह मिथिला रही है। इसे ही पश्चिमी मिथिला और पूर्वी मिथिला भी कहते हैं, जहाँ की भाषा मैथिली है। और अनादिकाल से अब तक सनातन धर्म का केन्द्र रहा है। वज्जी गणतंत्र यानि लिच्छिवी गणतंत्र यानि वैशाली का जनतंत्र में एक महत्त्वपूर्ण गण विदेह भी रहा है।

4. सूर्यवंशी इक्ष्वाकु के पुत्र थे निमि। यज्ञ में होता सम्बन्धी प्रकरण में राजा निमि पर उपेक्षा का आरोप लगाकर गुरु वशिष्ठ ने उनके शरीर को नष्ट हो जाने का श्राप दे दिया। पुत्रहीन राजा के शरीर का ऋषियों द्वारा अरणि मंथन से मिथि का जन्म हुआ। शरीर के मंथन से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम मिथि पड़ा। पिता निमि विदेह अवस्था में थे तभी मिथि के आविर्भाव होने के कारण मिथि का नाम विदेह भी हुआ। ये एक नए कुल व राज्य के जनक होने से 'जनक' कहलाए। इन्होंने जिस राज्य की स्थापना की उसे विदेह और मिथिला कहा गया। मिथिला एक विस्तृत प्रांत हुई जिसकी भाषा मैथिली एवं निवासी मैथिल कहलाए। इनके बाद जितने लोग शासक राजा बने सभी जनक कहे गए। मिथि की सताइसवीं पीढ़ी में ब्रह्मज्ञानी सीरध्वज जनक उत्पन्न हुए, जो वस्तुत: राजर्षि सिद्ध हुए। मैथिली जानकी सीता इन्हीं सीरध्वज जनक की पोस्य पुत्री थी; इनकी दूसरी पुत्री का नाम उर्मिला था। इनके छोटे भाई थे कुशध्वज जनक जिनकी भी दो पुत्रियाँ माँडवी व श्रुतिकीर्ति थी। सीता का विवाह रघुवंशी रामचन्द्र से, माँडवी का भरत से, उर्मिला का लक्ष्मण से और श्रुतिकीर्ति का शत्रुघ्न से हुआ था। अयोध्या नरेश राजसिंह दशरथ के पुत्र थे-राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न। राम की माता कौशल्या कोसल की, भरत की माता कैकेयी कैकेय (पंचनद) और लक्ष्मण-शत्रुघ्न की माता सुमित्रा मगध की राजकुंवारियाँ थीं।

5. निमि वंश अथवा मिथि विदेह जनक वंश के प्रमुख राजाओं के नाम:- उदावसु जनक, देवरात जनक, कृतिरथ जनक, सीरध्वज जनक, कृति जनक और महायशी (महावशी) जनक। बहुलाश्व जनक के पुत्र कृतिजनक जयसुद्ध (महाभारत) में कौरवों से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। महायशी अथवा महावशी जनक इन्हीं कृति जनक के सुपुत्र थे। महायशी जनक को भी

राजर्षि व आत्मज्ञानी राजा माना जाता है, ये जितेन्द्रिय थे। वैराग्य वृती महावशी जनक आजीवन अध्यात्म चर्चा में लीन रहे। या तो इन्होंने विवाह नहीं किया अथवा ये पुत्रहीन रहे। इनके बाद मिथिला से जनकों की गौरवशाली परम्परा समाप्त हो गई। इस यशस्वी नरेश के दरबार में याज्ञवल्क्य और अष्टावक्र सहित अनेक ब्रह्मवेता विद्वान शोभा बढ़ाते थे। याज्ञवल्क्य ब्रह्मवेताओं में अगुआ थे। इनके पाण्डित्य का सर्वत्र डंका बज रहा था। मिथिला की गार्गी ने इन्हीं याज्ञवल्क्य को अपनी तार्किक बुद्धि और पाण्डित्य से अचम्भे में डाल दिया था। एक बार तो याज्ञवल्क्य जैसे शिखर अध्येता को गार्गी के सम्मुख लाचार होना पड़ा। याज्ञवल्क्य-गार्गी संवाद द्वापर युग का चर्चित प्रसङ्ग है।

6. मिथिला राज्य में ही गौतम, कणाद, कपिल, जैमिनी, याज्ञवल्क्य, गार्गी, मैत्रेयी, अष्टावक्र, मंडन मिश्र और भारती आदि विभूतियों का जन्म हुआ। मिथिला प्रारम्भ से अब तक सनातन धर्म का केन्द्र रहा है, परन्तु यहाँ के लोग प्रमुखत: माता शक्ति भगवती के उपासक रहे, अत: तांत्रिकों का भी गढ़ रहा। जनकपुर प्रारम्भ से सहस्त्रों वर्ष तक विदेह-मिथिला की राजधानी रही। वर्तमान में जनकपुर नगर नेपाल (नयपाल) राज्य-साम्राज्य-देश के अन्तर्गत हिन्दुओं का सुप्रसिद्ध तीर्थ-स्थल है। सीता का प्राकट्य स्थान सीतामढ़ और स्वयम्बर-धनुषयज्ञ-धनुषभंग स्थान ''धनुषा'' भारत अन्तर्गत है।

7. कतिपय विद्वानों के अनुसार आदि विष्णु के आठवीं पीढ़ी में निमी तथा नवमी पीढ़ी में मिथि हुए जिन्हें मिथिल भी कहा गया। मिथि-मिथिल ने मिथिला राज्य की स्थापना की और सुशासन स्थापित किया। दसवीं पीढ़ी में जनक हुए जिन्हें ही विदेह कहा गया, इस राज्य को विदेह भी कहा गया, राजधानी का नाम पड़ा जनकपुर। इस राजवंश ने 34 पीढ़ी तक जनक नाम से राज्य किया।

8. पुराणों से शोध करके इस राजवंश के प्रमुख राजाओं की नामावली निम्नवत है। विष्णु-ब्रह्म-मरीचि-कश्यप (अदिति के संयोग से)-विवस्वान सूर्य-वैवस्वत मनु हुए। 1. मनु, 2. इक्ष्वाकु, 3. निमि, 4. मिथि (जनक), 5. उदावसु (आदासी), 6. नन्दिवर्द्धन, 7. सुकेतु (सुकण्ठ), 8. देवरात (देवरथ), 9. वृहदुक्थ (बृहदर्थ), 10. महावीर्य (महाविजय), 11. धतिमान, 12. सुधृति, 13. धृष्टकेतु (दृष्टिकेतु), 14. हर्यस्व, 15. मरू (मरूत), 16. प्रतिन्धक (प्रतिप), 17. कृतिरथ (कृतत), 18. देवमीढ़ (देवमित्र), 19. विवुध (विरूट), 20. महाधृति, (महादृति), 21. कृतिरात, 22. महारोमा, 23. स्वर्णरोमा, 24. रिस्वरोम (हस्वरोमा), 25. सीरध्वज, 26. भानुमान, 27. शतद्यम्न, 28. शुचि, 29. उर्जवह, 30. शतध्वज, 31. शकुनि, 32. अंजन, 33. कुरुजित, 34. अरिष्टनेमि, 35. श्रुतायु, 36. सुपार्श्व, 37. संजय, 38. क्षेमधि, 39. अनेना, 40. सत्यरथ, 41. उपगुरु, 42. उपगुप्त, 43. स्वागत, 44. स्वानन्द, 45. सुवर्चा, 46. सुभाषण, 47. श्रुत, 48. सुश्रुत, 49. जय, 50. विजय, 51. ऋत, 52. मुनय, 53. वातहव्य, 54. धृति, 55. बहुलाश्व, 56. कृति।

9. मिथि वंशी जनक वंशी परम्परा का गोत्रोच्चार इस प्रकार है :- गोत्र-वशिष्ठ; प्रवर ऋषि-वशिष्ठ, अत्रि, संकृति; वेद-यजुर्वेद, शाखा-माध्यन्दिन (वाजसनेयि); सूत्र-पारस्कर गृह्य सूत्र; गुरु-गौतम; कुलदेवी-चण्डिका; मत-शाक्त (वैष्णवी); राज्य-मिथिला। इस राजवंश की निमुड़ी शाखा एवं निशान शाखा के लोग आज भी जीवित हैं। निमुड़ी का गोत्रोच्चार :- गोत्र-कश्यप; प्रवर ऋषि-कश्यप, वत्सार (अप्सार), नैध्रुव; वेद-यजुर्वेद; शाखा-वाजसनेयि माध्यन्दिन; सूत्र-पारस्कर गृह्यसूत्र; गुरु-गौतम; देवी प्रभावती; इष्ट-रामचन्द्रजी; मत-वैष्णव; नदी-कोसी; मिथि के पुत्र के भाई का यह वंश है; ये अब भी निरहुत क्षेत्र (उत्तर-पश्चिम बिहार) एवं अवध प्रान्त में रह रहे हैं।

निशान का गोत्रोच्चार :- गोत्र-वत्स; प्रवर ऋषि-और्व्य, च्यवन, भार्गव, जामदगन्य, अप्नुवान; कुलदेवी-भगवती; वेद-सामवेद; शाखा-कौथुमी; सूत्र-गोभिल गृह्यसूत्र; वर्तमान में इनका ठिकाना व वास-बिहार राज्य के मुजफ्फरपुर क्षेत्र, पटना क्षेत्र, गया क्षेत्र एवं शाहाबाद क्षेत्र में है।

हवलदार मेजर पीरूसिंह

– कुँ. महेन्द्रसिंह छायण

राजस्थान शूरवीर, योद्धाओं, जुझारों के आत्मबलिदानों की यशोगाथाओं का साक्षी रहा है। यहाँ निपजे रणबांकुरों ने शौर्य, पराक्रम, त्याग और बलिदान से राष्ट्रजीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया। यहाँ के सपूतों ने तो युद्ध को मंगल मान लिया, जैसे कि– ***मरण नॅह मंगल गिणै, समर चढ़े मुख नूर।''***

भारत स्वतन्त्रोत्तर पर्यन्त हुए युद्धों में भी राजस्थान के रणबांकुरे शौर्य और पराक्रम में सबसे आगे रहे। कश्मीर को लेकर चल रही खींचातान में भी रणबांकुरों ने अद्भुत शौर्य का प्रदर्शन किया। उन्होंने बलिदान देकर स्वनाम अमर कर दिया। इसी बलिदान शृंखला में परमवीर हवलदार मेजर पीरूसिंह का बलिदान चिरस्मरणीय है।

आछै हिरदे ऊजळे, रज री राखण बात।
बैरी रामपुर जल्मियो, परमवीर परभात।।

हवलदार मेजर पीरूसिंह का जन्म 20 मई, 1918 में बैरी रामपुरा (झुन्झुनू जिला) शेखावाटी में हुआ। शेखावाटी क्षेत्र के बलिदानियों ने भारतीय इतिहास को गौरवान्वित किया। आज भी शेखावाटी क्षेत्र के हर गाँव का रणबांकुरा हरेक टुकड़ी में जान हथेली में रखकर सेवा दे रहा है।

रांगड घणा ही निपज्या, इण रजवट री ओट।
रणबांका रण मों गया, मरणै री कर होड।।

वीर भोग्या राजस्थान की धरती में अनेक शूरवीर, पराक्रमी निपजे। जो मृत्यु का आलिंगन करने अपने पराक्रम से दुश्मनों को सदैव नाकों चने चबवाते रहे। युद्धभूमि में मरण को मंगल मानते हुए बलिदान देने हेतु तत्पर हो उठे।

फौजी फौजां भैजिये, मेजर की हुंकार।
श्री नगर सब कांपियो, करी पीरू ललकार।।

मार्च, 1948 में पाकिस्तानियों से श्रीनगर (जम्मू) पर खतरा मंडराने लगा। पंचाल पर्वत शृंखला के पश्चिम में जब भारतीय फौज झंगड़ क्षेत्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने में व्यस्त थी, उसी समय दुश्मन पहाड़ी इलाकों से बारामूला और श्रीनगर में घुसपैठिये भेजने की फिराक में था। घुसपैठिये रोकने के लिये कादिर खान शृंखला पर अपना प्रभुत्व करने की ठानी। भारतीय सेना को इन्हीं मोर्चों से होते हुए गढवाल पल्टन को दुश्मन को नेस्तनाबूत करना था। इस कार्यवाही में राजपूताना रायफल की बी कम्पनी ने सहायता की। बी कम्पनी पर दुश्मनों द्वारा सुबह के समय हमला किया गया, जिसे भारतीय नौजवानों ने असफल कर दिया। इसके बाद राजपूताना रायफल्स ने आगे बढने का निर्णय लिया। सामने के दो पहाड़ों पर दुश्मन फैले हुए थे। राजपूताना रायफल्स ने 18 जुलाई को आधी रात में पहली पहाड़ी पर आक्रमण कर दिया। पहाड़ी तक जाने वाले दुर्गम मार्ग के दोनों ओर गहरी खाईयाँ थी। इस रास्ते पर नाकाबंदी करने के लिये घुसपैठियों ने पाँच बंकर बना रखे थे। इस रास्ते को पार करना असंभव था। बी कम्पनी जैसे ही आगे बढी, दुश्मन ने हमला कर दिया। बी कम्पनी को वहीं रुकना पड़ा। इन्हीं बंकरों में दुश्मनों की ऐसी चौकी थी जो रात में भी सजग रहकर किसी भी प्रकार की हलचल की टोह ले सकती थी। बढ़त रुकने के आधे घण्टे बाद ही बी कम्पनी के 51 जवान हताहत हो गये।

राजपूताना रायफल, अबखी री आवाज।
परमवीर टुकड़ी लड़ी, सुण रण भेरी गाज।।

रणभूमि के ऐसे क्लिष्ट मोड़ पर नैया पार करने के लिये किसी असाधारण रणबांकुरे की आवश्यकता थी। यह कारनामा कर दिखाया हवलदार मेजर पीरूसिंह ने। रणभेरी की गाज सुनकर उन्होंने शीघ्र ही तीव्र गति के साथ पहले बंकर पर धावा बोल दिया।

तैनात हुवा भोमिया, छाती सांमी टेक।
रांगड सगळा बिफरिया, बन्दूक तिणां हरेक।।

दशुमनों को नेस्तनाबूत करने की इस कार्यवाही में हवलदार मेजर पीरूसिंह के नेतृत्व में भारतीय जवानों ने दुश्मनों से लड़ने के लिये बन्दूक व रायफलों के साथ बिफरते हुए छाती को वज्र बनाकर उनके समक्ष रखा अर्थात् तैनात हो गये।

रजपूती हूंको उठे, हिये घाल्या घाव।
राता डोरा आंखियां, ऐडी बखता आव।।

हवलदार मेजर पीरूसिंह के वज्ररूपी हृदय से हुंकारें उठने लगी। उनकी आँखों में लाल डोरे आ गये। अत्यन्त क्लिष्ट मोड़ पर मेजर ने अद्‌भुत रणकौशल का परिचय दिया। असाधारण शौर्य दिखाते हुए देखते ही देखते पहला बंकर उड़ा दिया।

रांगड सगळा रोकिया, पीरू पूगियो थेट।
घुसतांह घुसपैठियांह, होव गया सब रेत।।

पीरूसिंह ने सभी जवानों को रोकते हुए दुश्मन के सामने अकेले आगे बढ़ने का निर्णय लिया। पहले बंकर से ही उन्होंने घुसपैठियों का सफाया करना शुरू कर दिया।

बंकर उठै बिखेरिया, नीचा आ पडियांह।
शेखावत सीने तिणो, ग्यो आगे जरखांह।।

बंकरों पर धावा बोलते ही दुश्मन के ग्रेनेड उन पर फट पड़े। ग्रेनेड के टुकड़े-टुकड़े उन पर फट पड़े। ग्रेनेड के टुकड़े-टुकड़े शरीर में जगह-जगह धंस गये, पर ये गहरे घाव भी उस रणबांकुरे को आगे बढ़ने से रोक नहीं पाए। बंकर के अन्दर घुसते ही अपनी संगीन से उन्होंने मशीनगन चलाने वाले घुसपैठियों को रोक दिया और स्वयं मोर्चा में आगे रहे। उन्होंने पाया कि वे अकेले हैं, उनके सेक्शन के सारे साथी तब तक शहीद हो चुके थे। उस रणबांकुरे के शरीर से खून बह रहा था। पीरूसिंह ने सोचा कि ''अभी वे आगे नहीं बढ़े तो उनकी मेहनत पर पानी फिर जायेगा।'' उस समय ***''चण्डी जिनकी कुलदेवी हो, बल तो उनमें आता ही।''*** को चरितार्थ कर आगे सरकते हुए दुश्मन के दूसरे बंकर पर जोरदार हमला किया। इसी समय ठीक उनके सामने एक ग्रेनेड फटा, जिसके विस्फोट से उसका चेहरा लहुलुहान हो गया। सिर व माथे से रिसते रक्त के कारण उन्हें दिखाई देना कठिन हो गया। तब तक उनकी स्टेशनगन की गोलियाँ भी खत्म हो चुकी थी।

करां पताका कड़कती, उर रण चाह उमंग।
माटी हरखी महकती, परभाते री जंग।।

भारतीय जवानों के हाथ में फरफराता तिरंगा ध्वज तथा हृदय में रणक्षेत्र में लड़ने की उमंग हिलौरें ले रही थी। पीरूसिंह के उत्कट राष्ट्रप्रेम के प्राबल्य के कारण मातृभूमि भी महक उठी।

रांगड पीरू रेंगियो, आगे जा अवधूत।
भेजे गोळी लागते, हुवो शहीद सपूत।।

पीरूसिंह ने सारे बंकरों को उड़ाकर अनेकों घुसपैठियों को परलोक भेज दिया। उनकी गोलियाँ खत्म हो चुकी थी फिर भी येन-केन-प्रकारेण रेंगते हुए बाहर की ओर सरक कर अगले ग्रेनेड पर बम फेंका। ग्रेनेड के फटने के साथ ही वे पूरे वेग के साथ दुश्मनों के बंकर में कूद पड़े। अपनी संगीन से दोनों घुसपैठियों को परलोक भेज दिया। स्फूर्ति से अगले मोर्चे में कूदने का प्रयास किया। इसी समय दुश्कन की एक गोली उनके सिर में जा धंसी तब तक उन्होंने उस बंकर में भी ग्रेनेड फेंक दिया था। मेजर पीरूसिंह ने असाधारण वीरता दिखाते हुए वीरगति प्राप्त की।

रजपूती रजवट तणी, सूरा दियो सबूत।
जुध में आगे जुंझियो, रंग देऊँ रजपूत।।

हवलदार मेजर पीरूसिंह ने अदम्य साहस और वीरता से प्राणों की परवाह किये बिना शत्रुवाहिनी का बहादुरी से सामना करते हुए बलिदान दिया। ऐसा सपूत धन्य है, जिन पर आज भारतवर्ष को गर्व है, अभिमान है। भारत सरकार ने उन्हें मरणोपरान्त 'परमवीर चक्र' से सम्मानित किया।

विचार-सरिता

(त्रयत्रिंशत् लहरी)

– विचारक

श्रुति कहती है–''एको ब्रह्म द्वितीय नास्ति।'' अर्थात् एक ब्रह्म ही है दूसरा कुछ है ही नहीं। एक परमात्मा ही हमें दृश्य रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, निहारिकाएँ, पवन, पानी, आकाश, अग्नि, धरा आदि के रूप में वही तो धरा हुआ है। वह चेतन तत्व ही अनेकानेक रूपों में प्राणी मात्र का हित सम्पादित कर रहा है। तरंग, फेन, बुदबुदे, जलकण, वाष्प बर्फादि नाम अनेक हो सकते हैं लेकिन जल के अतिरिक्त कुछ नहीं। ऐसे ही पिण्ड, ब्रह्माण्ड में दृश्य, अदृश्य रूप से सब वही तो है। उस परमात्मा के अतिरिक्त अन्य आया कहाँ से। सूर्य प्रकाश और ऊर्जा दे रहा है। चन्द्रमा चांदनी, शीतलता व अमृतकण बरसा रहा है। पवन, पानी, धरा, वनस्पति, औषधियाँ आदि सब जीव के हितार्थ प्रतिबद्ध हैं।

अस्ति, भाति, प्रिय रूप से उस परम सत्ता में कहीं भी द्वैत की गुजांइश नहीं है। सामान्य चेतन ही सर्वत्र एकरस होकर विराजित है। विशेष चेतन उसका प्रतिबिम्ब है, भ्रांति करके सत्य भास रहा है। बुद्धि की अपेक्षा से ही चेतन में द्वैत की भ्रांति हुई है। बिम्ब रूपी सूर्य का प्रतिबिम्ब जल या दर्पण के परिणामस्वरूप है। जल या दर्पण की उपाधि के कारण उसमें दृष्टिगोचर होने वाला सूर्य उस बिम्ब से भिन्न नहीं अपितु उस बिम्ब करके ही उसकी सत्ता है। सूर्य की सामान्य प्रकाश जो रूई, कागज व अन्य ज्वलनशील पदार्थों पर पड़ता है तो उनके रंग, रूप और नाम को उजागर करता है जो उस रूई आदि पदार्थों के होने का बोध कराता है।

वही सूर्य का सामान्य प्रकाश सूर्यकान्तमणि में से केन्द्रित होकर एक निश्चित दूरी पर रखे हुए कागजादि के दाह का कारण भी बन जाता है। यह दाहिक क्रिया उस सामान्य प्रकाश में तब हुई जब सूर्यकान्तमणि की उपाधि में से उस प्रकाश को गुजारा गया। ऐसे ही सामान्य चेतन का प्रतिबिम्ब जब बुद्धि रूपी उपाधि में बनता है तब उसको जीव की संज्ञा दी गई है। बुद्धि का अधिष्ठान सामान्य चेतन (कूटस्थ) तथा बुद्धि और उसमें भासित प्रतिबिम्ब ये तीनों मिलकर ही जीव कहलाते हैं। अलग से जीव नाम की कोई वस्तु है नहीं। बुद्धिजन्य मिथ्या ज्ञान का नाम ही जीव है जिसका वास्तविक स्वरूप तो ब्रह्म ही है। सत्ता स्वरूपी उस ब्रह्मतत्व को हम इन चर्मचक्षुओं से तो नहीं देख सकते किन्तु ज्ञान के नेत्रों से उस सत्ता की अनुभूति अवश्य कर सकते हैं।

कोई अतिसूक्ष्म सत्ता तो है जो सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि को नियंत्रित कर रहा है। सूर्य का समय पर उदय-अस्त होना, चन्द्रमा की कलाएँ घटाना-बढ़ाना, वनस्पति का फलना-फूलना, ऋतुओं का समय पर आना व उनका प्रभाव जो हम महसूस कर रहे हैं, ऐसा होने का अर्थ ही यह है कि एक चेतन सत्ता है जो हमको हमारे होने का अहसास कराती है।

इसी बात को समझने के लिये हम एक दृष्टांत का सहारा लेते हैं। देश में हम देख रहे हैं कि सेना सजग होकर सीमा की रक्षा कर रही है, पुलिस भीतरी व्यवस्था को सुचारू करने में तत्पर है, न्याय व्यवस्था कानून का उल्लंघन करने वालों को दण्डित करती है और व्यवस्थापिका अपना कार्य कर रही है। इस सबको संचालित कौन करता है? आप कहेंगे कि सरकार यह सब चलाती है। जरा विचार करें कि सरकार किस आदमी का नाम है। क्या राष्ट्रपति सरकार है? क्या प्रधानमंत्री और मंत्री मण्डल सरकार है? या चपरासी से लेकर उच्चाधिकारी में से कोई सरकार है? जैसे कोई व्यक्ति सरकार नहीं हो सकता, पर कोई सरकार की सत्ता है जिससे यह सब संचालित हो रहा है। ऐसे ही परमात्मा दृश्य रूप में दृष्टिगोचर नहीं होते हुए भी अपनी सत्ता से समस्त ब्रह्माण्डों का संचालन कर रहे हैं।

परमात्मा का स्वरूप अस्ति, भाति प्रिय रूपता है, जो सर्वत्र सामान्य रूप से विद्यमान है। सामान्य चेतन में

(शेष पृष्ठ 26 पर)

गतांक से आगे

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में राजपूतों का योगदान

– संकलन : भंवरसिंह मांडासी

उत्तरप्रदेश के जिन राजपूतों ने स्वतंत्रता संग्राम में योगदान दिया उनमें अमेठी के राजा लाल माधवसिंह का नाम भी विशेष रूप से गिनाया जा सकता है। सिविल रिविलियन इन इण्डियन म्यूटिनीज के आधार पर सवाईसिंह धमोरा राजस्थान ने लिखा है-शंकरपुर के राजा बेनी माधवसिंह, हनुमन्तसिंह, नानासाहब, बालाराव, ज्वालाप्रसाद, मेहन्दीहसन और मुरादहसन 1857 की क्रान्ति के प्रमुख नेताओं में से थे। अंग्रेजों द्वारा 13 नवम्बर, 1858 को रामकसिया का किला जीतने के बाद अंग्रेजी सत्ता के व्रिद्रोही लाल माधवसिंह ने अमेठी के किले को जीतने की योजना बनाई। डॉ. एल.बी. चौधरी ने लिखा है-अमेठी के राजा लाल माधवसिंह और हसनपुर के हुसैन अली जिले के अन्य बागी नेताओं में से थे। लाल माधवसिंह के 1857-58 के स्वतंत्रता संग्राम में योगदान देने की साक्षी कई ग्रन्थ देते हैं। जिनमें सुल्तानपुर गजेटियर, अंग्रेज पर्यवेक्षक विलियम हार्वड रसेल की डायरी व तवारीख-ए-अमेठी मुख्य है।

1858 ई. के उपरान्त भी क्रान्तिकारियों का आंदोलन चलता रहा। उन क्रान्तिकारियों में रामप्रसाद बिस्मिल भी मुख्य क्रान्तिकारी थे। रामप्रसाद बिस्मिल तंवर राजपूत थे जिनको बिना शोध किये लेखकों ने ब्राह्मण बना डाला है। रामप्रसाद बिस्मिल का पूरा नाम रामप्रसादसिंह था। इनके दादा नारायणसिंह तंवर (राजपूत) मुरैना जिले के रूअर बरवाई गाँव में रहते थे। रामप्रसादसिंह के पिता मुरलीसिंह का विवाह ग्राम जोधपुरा जिला आगरा के निवासी परिहारों के यहाँ हुआ था। रामप्रसाद की बहिन शास्त्री देवी जो उत्तम नगर दिल्ली में रहती थी, वे कहा करती थी-''मेरा भाई रामप्रसाद बचपन से ही क्रान्तिकारी विचारों का रहा। वह ग्राम के बच्चों को एकत्रित कर अंग्रेजों के विरुद्ध क्रान्ति की बात कहता था। अंग्रेजी समय था। भय से दादा ने गाँव छोड़ा। एक पण्डितजी नारायणसिंह को नौकरी लगाने के लिये अपने लड़के के पास ले गये जो शाहजहाँपुर में थानेदार था। ये पण्डितजी नारायणसिंह के ननिहाल के थे। थानेदार ब्राह्मण ने नारायणसिंह का परिचय चाचाजी कहकर करवाया इससे अन्य लोग उनको पण्डितजी कहने लगे व नारायणसिंह को नारायणदत्त बनाकर नौकरी दिलवा दी और मन्दिर में रहने का इन्तजाम कर दिया। भाई साहब ने यहाँ भी सेना तैयार कर ली। इन्हीं दिनों जलियांवाला हत्याकाण्ड हो गया। इस पर रामप्रसाद बहुत खिन्न हुए और उन्होंने एक शेर लिखा :-

''ये फक्त इस जुर्म से तुझको गाफिल क्या मिला।
नीम 'बिस्मिल' छोड़ने से तुझको हासिल क्या हुआ।।''

इसी समय से वे रामप्रसाद 'बिस्मिल' के नाम से जाने जाने लगे। रामप्रसाद की क्रान्तिकारी गतिविधियाँ तेज हुई। हथियार खरीदने के लिये उनके पास पैसे नहीं थे। उस समय रेल द्वारा अंग्रेजों का खजाना जा रहा था। रामप्रसाद व उसके साथियों ने रेल को लूट लिया। बाद में रामप्रसाद, ठाकुर रोशनसिंह, असफाक उल्ला आदि पकड़े गये और 1927 ई. में उनको फाँसी दे दी गई। रामप्रसादसिंह 'बिस्मिल' की बहन शास्त्री देवी कौशमा मैनपुरी के जादुवों के ब्याई थी। उनके पुत्र हरिश्चन्द्रसिंह हैं जो दिल्ली के उत्तम नगर में अपने पैतृक मकान में रहते हैं। रामप्रसाद बिस्मिल के साथी क्रान्तिकारियों में ठाकुर रोशनसिंह का नाम भी उल्लेखनीय है। वे कट्टर आर्य समाजी थे फिर गेंदालाल दीक्षित के दल शिवाजी समिति के सदस्य बन गये। रेल का खजाना लूटने के अपराध में वे भी पकड़े गये। 19 दिसम्बर, 1927 के दिन फांसी पर लटकाये गये। 13 दिसम्बर, 1927 को उन्होंने अपने मित्र को पत्र लिखा जिसमें लिखा था :-

जिन्दगी जिन्दादिली को जान ए रोशन।
वरना कितने मरे और पैदा हुए जाते हैं।।

1929 ई. के बाद के राजपूत क्रान्तिकारियों में खूबसिंह जयनगर (बिजनौर) का भी अपना विशेष स्थान रहा है।

घरोण्डा जिला करनाल के ठाकुर मलखानसिंह मढ़ाढ़ को मुल्तान जेल में मार दिया गया। सालवान के ठाकुर जयदेवसिंह को भी मार डाला था। रतिभानसिंह मढ़ाढ़ भी इसी प्रकार मारे गये। ठाकुर लक्ष्मणसिंह, दुर्गसिंह, करारसिंह पर भी अत्याचार हुए और पृथ्वीसिंह भाटी को काले पानी की सजा दी गई।

कांग्रेस के नेतृत्व में चलने वाले स्वतंत्रता संग्राम में भी बिहार व उत्तरप्रदेश के राजपूतों का विशेष योगदान रहा। बिहार के मगध क्षेत्र में राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाले राजपूतों में अनुगृह नारायणसिंह प्रमुख नेता के रूप में उभरे। मुंगेर जिले के गिद्धोर राजपरिवार के कुमार कालिकासिंह ने इस आंदोलन में ख्याति प्राप्त की। अंग्रेजों ने इनके विरुद्ध देशद्रोह का मुकदमा चलाया और कारावास की सजा दी। ठाकुर बनारसीप्रसादसिंह भी 1916 में राष्ट्रीय आंदोलन में आ धमके और बढ़-चढ़कर भाग लिया। इसी क्षेत्र के नन्दकुमारसिंह, श्यामाप्रसादसिंह, नेमधारीसिंह आदि राजपूत युवकों ने अपने क्षेत्र में आंदोलन को गति प्रदान की। शाहबाद के हरिहरसिंह, सारण के प्रभूनारायणसिंह, सारंगधरसिंह आदि हजारीबाग के रामनारायणसिंह, समस्तीपुर के सत्यनारायणसिंह शिवपुर के नवाबसिंह आदि-आदि बहुत से राजपूतों ने इस राष्ट्रीय आंदोलन में बढ़चढ़ कर भाग लिया। इस प्रकार कांग्रेस के साथ रहकर भी स्वतंत्रता आंदोलन में राजपूतों का योगदान कम नहीं रहा।

इस प्रकार अंग्रेजों के विरुद्ध किये गये संघर्षों एवं आंदोलनों में राजपूतों की महत्त्वपूर्ण भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता पर राजपूत विरोधी नीति के अन्तर्गत लिखे गये इतिहासों में या तो इनके नाम ही अंकित नहीं किये गये हैं या किये गये हैं तो नाममात्र क्योंकि इस नीति पर चलने वाले लोग इनके महत्त्व को अपने मार्ग में बाधक समझते थे। पर जो भी कोई शोधकर स्वतंत्रता संग्राम का निष्पक्ष इतिहास लिखेगा उसमें राजपूतों के इस महत्त्वपूर्ण योगदान को भुलाया नहीं जा सकेगा।

पृष्ठ 24 का शेष

विचार-सरिता

बोलना चलना आदि विशेष व्यवहार होता नहीं। परन्तु जहाँ अन्त:करण रूप उपाधि होती है, वहाँ चिदाभास रूप से विशेष चैतन्य होकर बोलना, चलना आदि व्यवहार होता है और इस लोक व परलोक में गमनागमन एवं कर्तापना-भोक्तापना इत्यादि विशेष व्यवहार होता है। इसमें सत्ता रूप से जो सामान्य चैतन्य है वह ब्रह्म है सो सत्य है। उपाधि करके जो भास रहा है वह चिदाभास है सो मिथ्या है। ऐसे ही पाप-पुण्य का कर्तापना, दु:ख-सुख का भोक्तापना, परलोक-इसलोक में गमनागमन, जन्म-मरण, चौरासी लाख योनियों की प्राप्ति इत्यादि संसार रूप धर्म भी सामान्य चेतन के नहीं, चिदाभास के हैं, आत्मा के नहीं।

साधक को यह निश्चय करना चाहिए कि विशेष-चैतन्य रूप जो चिदाभास और उसके जो धर्म हैं, सो मेरे नहीं, मेरे में नहीं। ये मेरे में कल्पित हैं। मैं इनको जानने वाला अधिष्ठान रूप सामान्य चेतन इनसे न्यारा हूँ। इनका साक्षी व नित्य मुक्त हूँ। साधक को यह भी समझना है कि भीतर देहादि में ''मैं हूँ'' यह अस्ति है। मैं ''जानता हूँ'' (भासता हूँ) यह भाति है। ''मैं अपने आपको प्यारा हूँ'', यह प्रिय है। ऐसा जो मेरा निज स्वरूप है उसमें कभी कोई विचार या विकृति नहीं हो सकती।

देह की जाग्रत, स्वप्न, सुषोप्ति आदि अवस्था, मुर्छा व समाधि का भी मैं प्रकाशक हूँ। समस्त विषयों का अनुभव व समस्त अवस्थाओं की संधि का भी मैं प्रकाशक हूँ। वृत्तियों की संधि का भी मैं प्रकाशक हूँ। इस रीति से देह के समस्त व्यापारों को अपने में न मानते हुए साक्षीभाव से सर्वत्र समानरूप से, व्यापक ब्रह्मरूप जानकर अपने आप में रहना ही साधक का चरम लक्ष्य है। ऐसा जिसने जान लिया, मान लिया व अपने आप में अनुभूत कर लिया वह ही इस संसार में धन्य है। मैं ऐसे अनुभवी, नित्यमुक्त महापुरुषों के चरणों में श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हूँ।

(भूल से इस श्रृंखला की चौतीसवीं कड़ी गत अंक में पहले प्रकाशित हुई है और अब यह तेतीसवीं कड़ी प्रस्तुत है।)

युद्ध की भिक्षा

– हनुवन्तसिंह नंगली

मगधराज जरासन्ध बड़ा बलवान था। उसे दस हजार हाथियों का बल प्राप्त था। जरासन्ध ने बीस हजार आठ सौ राजाओं को जीतकर पहाड़ की घाटी में एक किले में कैद कर दिया था। जरासन्ध ने भगवान कृष्ण से भी अठारह बार युद्ध किया और एक बार उसने भगवान को भी जीत लिया था। एक दिन भगवान श्रीकृष्ण की राजसभा में एक नया पुरुष आया। उसने भगवान श्रीकृष्ण से जरासन्ध द्वारा कैद किये हुए राजाओं की व्यथा सुनाई। जब वह व्यक्ति भगवान को बन्दी राजाओं की व्यथा सुना रहा था, उसी समय देवर्षि नारदजी भी वहाँ आ गये। नारदजी के आने पर भगवान ने उन्हें तीनों लोकों का हाल सुनाने को कहा और यह भी पूछा कि युधिष्ठिर आदि पाण्डव इस समय क्या कर रहे हैं। नारदजी ने बताया कि पाण्डव राजसूय यज्ञ करना चाहते हैं। इसी समय सभा में पाण्डवों द्वारा भगवान कृष्ण के पास भेजा हुआ दूत भी आया। दूत ने आकर प्रार्थना की कि धर्मराज युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करना चाहते हैं और उस यज्ञ में पधारकर आप सबको दर्शन दें।

भगवान श्रीकृष्ण ने फिर देवर्षि नारद और उद्धव से इस सम्बन्ध में पूछा। देवर्षि नारद ने भगवान को राजसूय यज्ञ में पधारकर दर्शन देने को कहा। सभा में बैठे यदुवंशियों को यह बात पसन्द नहीं आई। वे पहले जरासन्ध को जीतकर बन्दी राजाओं की मुक्ति चाहते थे। श्री भगवान ने इस पर उद्धवजी से पूछा। उद्धवजी ने कहा कि नारदजी ने पाण्डवों के राजसूय यज्ञ की बात की वह भी ठीक है पर शरणागतों की रक्षा करना भी हमारा कर्तव्य है। राजसूय यज्ञ भी वही कर सकता है जो दसों दिशाओं पर विजय प्राप्त कर ले और इन दोनों कामों के लिये जरासन्ध को जीतना आवश्यक है।

जरासंध ब्राह्मण भक्त था। ब्राह्मण उससे कोई मांग करता तो वह उसे अवश्य पूरी करता। उद्धवजी ने कहा कि भीमसेन जरासन्ध के पास ब्राह्मण वेष में जावे और युद्ध की भिक्षा मांगे। भीमसेन आपकी शक्ति से उसे द्वन्द्व युद्ध में अवश्य मार डालेगा।

उद्धवजी की सलाह मानकर भगवान श्रीकृष्ण ने इद्रप्रस्थ को प्रस्थान किया। इन्द्रप्रस्थ पहुँचने पर भगवान का भव्य स्वागत सत्कार किया गया। इन्द्रप्रस्थ पहुँचने के कुछ समय पश्चात भीमसेन, अर्जुन व श्रीभगवान तीनों ब्राह्मण वेश धारण कर जरासंध के पास गए और बोले हम आपसे कुछ याचना करने आये हैं। जरासंध ने उनके हावभाव देखकर और उनके चिह्नों से उन्हें पहचान लिया और बोला कि आप ब्राह्मण नहीं हैं क्षत्रिय हैं पर जब आप ब्राह्मण वेष धारण कर मांगने आये हैं तो मैं अवश्य आपको दूंगा।

श्री भगवान ने इस पर कहा कि हम लोग अन्न के इच्छुक नहीं हैं–क्षत्रिय हैं। हम आपके पास युद्ध के लिये आये हैं। यदि आपकी इच्छा हो तो हमें द्वन्द्व युद्ध की भीक्षा दीजिये। श्री भगवान ने इसके पश्चात भीमसेन, अर्जुन और अपना परिचय दिया। जब श्री भगवान ने अपना परिचय कराया तो जरासंध हंसने लगा और फिर क्रोधित होकर बोला अरे मूर्खो, यदि तुम्हें युद्ध की ही इच्छा है तो मैं तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार करता हूँ। जरासंध फिर श्री भगवान से कहने लगा, कि तुम तो डरपोक हो तुमने तो डर से अपनी नगरी छोड़ दी थी इसलिये मैं तुम्हारे साथ नहीं लड़ूँगा। यह अर्जुन भी कोई योद्धा नहीं है। यह मेरी जोड़ी का वीर नहीं है इसलिए इसके साथ भी नहीं लड़ूंगा। जहाँ तक भीमसेन का प्रश्न है वह मेरे जोड़ का वीर है उसके साथ मैं लड़ सकता हूँ। जरासन्ध ने यह कहकर एक गदा भीमसेन को दे दी और एक

(शेष पृष्ठ 30 पर)

समाज के युवाओं के नाम

– पैपसिंह कल्लावास

परिवार, समाज, राज्य व राष्ट्र में युवाओं का बड़ा ही महत्त्व है। इसलिए कहा गया है कि समाज व राष्ट्र में युवा होनहार, प्रतिभावान, कर्मशील, परिश्रमशील, लग्नशील तथा कुछ करने की उमंग, दृढ़ निश्चय अपने मन में सोच लें तो वह करके ही रहते हैं। जिस प्रकार स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है उसी भाँति एक स्वस्थ संस्कारित समाज में स्वस्थ व संस्कारित बीज रूपी पौधा बालक-बालिका के रूप में पलता, बड़ा होता हुआ वह वृक्ष बनता है।

शिवाजी युवा ही थे तब जीजा बाई ने उन्हें वीर रस की कहानियाँ सुना-सुनाकर एक वीर योद्धा बना दिया जिसने अपना साम्राज्य ही स्थापित नहीं किया बल्कि आमजन के हृदय का तारा बन अपनी विजय पताका लहराई।

महाराणा प्रताप ने भी युवावस्था में विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए अपने ही राज परिवार व बाहरी लोगों का विरोध झेलते हुए मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये मुगलों को व अकबर को कड़ी टक्कर दी।

आधुनिक युग शीघ्रता से अर्थ तंत्र के साथ-साथ संचार तंत्र की ओर अग्रसर हो रहा है। जो युवा जितना सूचना तंत्र, संचार तंत्र में पारंगत बन गया वह दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करता हुआ बढ़ता जा रहा है तथा बढ़ता जायेगा।

हमारे समाज में क्षत्रिय युवा बालक-बालिकाओं में परिश्रम, शौर्य, पराक्रम, मेहनत व त्याग की कमी नहीं है लेकिन राज्य व राष्ट्र की तुष्टीकरण की नीति के कारण योग्य व होनहार युवा को आरक्षण के मुकाबले कड़ा संघर्ष कर आगे बढ़ना पड़ रहा है। लेकिन हिम्मत वाले की कीमत होती है। हार हमारे संस्कारों में नहीं है। हमने सदैव विजय पताका लहराना सीखा है। उसमें आप अग्रणी रहें। अव्वल आयें। यही प्रभु से व आपसे कामना है।

समाज वर्तमान में दो मतों के द्वन्द्व से गुजर रहा है। जो बालिकाएँ काबिल हैं, होनहार हैं, अच्छी जगह पहुँच गई हैं या पहुँचने वाली हैं, उनको उनके लायक वर व घर बार नहीं मिल पाता। मिलता है तो बछड़े का मोल तोल भारी होता है। कैसी विडम्बना है? एक तरफ बालिका जी जान से परिवार, समाज व राज्य का नाम रोशन कर रही है, घर वाले अच्छी तामिल देकर योग्य बनाने में अपना सब कुछ लुटा रहे हैं, दूसरी तरफ उसके लिये अच्छा वर ढूंढने में बाजार भाव से लड़के को ऊँची बोली लगाकर क्रय करना पड़ रहा है। ऐसी मानसिकता वाली सोच से, बहनों से आग्रह व निवेदन है कि कठोर कदम उठावें तथा ऐसी सोच वालों से वास्ता न बनावें।

इसी भाँति पढ़े लिखे होनहार युवा आप अच्छे स्थान पर पहुँच ही गए हैं या पहुँचने वाले हैं तो सोच को बड़ा रखें तथा आगे आकर ऐसा कदम उठावें कि 'मैं दहेज में कुछ नहीं लूंगा तथा दस्तूर में एक रुपया व नारियल ही लूँगा।'

ईश्वर ने आपको इतना योग्य व कर्मशील बना ही दिया है तो फिर दूसरे परिवार को क्यों नाजायज परेशान कर उसे गरीबी की दहलीज पर पहुँचाने में मददगार बनते हो।

मैंने जोधपुर में एक ऐसे समाज को बारीकी से तीसों साल देखा है जो करोड़पति लड़का होकर गरीब से गरीब घर की लड़की लाता है तथा करोड़पति लड़की वाला गरीब से गरीब लड़के के साथ विवाह कर दो चार साल में अपने सहयोग से उसे समकक्ष बना लेता है।

समाज में ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करने का समय आ चुका है। अत: दोनों युवाओं बालक-बालिकाओं से पुन: आग्रह है कि आप अपना निर्णय स्वविवेक से लें। पीछे की नहीं आगे के लिये सोचें तथा एक नया संदेश परिवार व समाज में धनी व निर्धन तबके को दें ताकि आने वाला भविष्य मिठास भरा, अपनापन लिये, आशाओं से भरपूर तथा नई सौगात लेता हुआ आये और आपके लिये गए निर्णय को आने वाली भावी पीढ़ी उदाहरणस्वरूप लेकर मार्ग बनावे।

अपनी बात

रविन्द्रनाथ टैगोर की एक कविता में कथा है, जिसका शीर्षक है-अवसर बीत गया। एक भिक्षु सुबह-सुबह घर से निकला। भिखारी अपनी झोली में थोड़े से दाने डाल लेते हैं घर से निकलते समय, वैसे ही उसने भी चावल के थोड़े दाने डाल लिए थे। क्योंकि खाली झोली हो तो कोई देता नहीं। झोली भरी हो तो लोगों को थोड़ा लाज-संकोच आता है। किसी के द्वार पर भिखारी दस्तक देता है तो मकान मालिक देखता है कि उसकी झोली में कुछ है, तो उसे लगता है कि पड़ोसी ने दिया है, अब अगर वह न दे तो अहंकार को चोट लगती है। लोग दया के कारण तो भिखारी को कुछ देते नहीं, अहंकार के कारण देते हैं। इसीलिए सभी भिखारी अपनी झोली में थोड़े दाने या थोड़े पैसे घर से ही डालकर चलते हैं। पैसा पैसे को खींचता है, दाना दाने को खींचता है।

वह भिखारी भी अपनी झोली में कुछ चावल के दाने डालकर घर से निकला था। राह पर आते ही चौंक गया, देखा कि राजा का रथ आकर रुका है। उसके आनन्द का तो पारावार न रहा। बहुत बार राजद्वार तक गया था, लेकिन पहरेदार भीतर ही न जाने देते थे। राजा के सामने झोली फैलाने का अवसर ही नहीं मिला था। आज मिल गया अवसर। उसके आनन्द का तो पारावार ही नहीं। वह तो ठगा सा खड़ा रहा। तभी राजा रथ से उतरा और उसने अपनी झोली उस भिखारी के सामने कर दी। भिखारी तो बहुत घबड़ा गया। देने की तो उसकी आदत ही नहीं थी। उसने तो माँगा ही माँगा था। सम्राट ने कहा कि सुन भाई, माना कि तू भिखारी है और तुझसे मैं माँगू यह उचित भी नहीं, लेकिन ज्योतिपियों ने कहा है कि राज्य पर बड़ा संकट है। संकट टल सकता है यदि आज सूरज उगने के समय सुबह-सुबह मैं निकलूं और जो भी मुझे रास्ते पर पहली बार मिले उसी से भीख माँग लूं तो संकट टल सकता है। ना मत करना। चार दाने भी देगा तो चलेगा। नाम मात्र को कुछ भी दे दे।

अब भिखमंगा हतप्रभ खड़ा है। सोचा था राजा से माँग लूंगा, सोने से भर जाएगी झोली। यह तो उल्टा हो गया और पास के दाने भी चले। मुट्ठी भरता है पर हाथ नहीं निकल पाता झोली से। आदत पुरानी है, लिया ही है, कभी दिया ही नहीं। बड़ी हिम्मत करके एक दाना, सिर्फ एक दाना चावल का राजा की झोली में डाल दिया। औपचारिकता पूरी हो गई तो राजा तो बैठा रथ में, स्वर्ण रथ जा भी चुका, धूल उड़ती राह पर रह गई और भिखारी का मन पश्चाताप से भर गया। कुछ मिलता वह तो मिला नहीं, पास था कुछ वह भी गया।

उस दिन उसे बहुत दान मिला, इतना कभी नहीं मिला था। देने वाले को मिलता है। यह जगत चारों तरफ से बांटता है, यदि हम देने को तैयार हों। ज्यादा दिया नहीं था उसने मगर जो दिया वह भिखारी के मन से बहुत था, साम्राज्य ही दे दिया था। बहुत दान मिला, झोली भर गई मगर चित्त में पश्चाताप था उस एक दाने का जो कम हो गया था। यदि राजा न मिला होता तो एक दाना और ज्यादा होता।

हम ऐसे ही हैं, जो मिल जाता है उसके लिये धन्यवाद नहीं देते, जो नहीं मिलता उसके लिये शिकायत जरूर करते हैं। हमें कितना मिला है, हमने कभी मंदिर में जाकर परमात्मा को धन्यवाद दिया है? नहीं, लेकिन जो नहीं मिला है, उसकी शिकायत तो श्वास-श्वास में भरी है। हमारे प्राण शिकायतों से भरे हैं। भिखारी थका-मांदा लौटा और झोली घर आकर पटक दी। पत्नी ने कहा,-उदास दिखते हो, झोली इतनी तो कभी नहीं भरी थी। उसने कहा-क्या खाक भरी, आज जैसा दुर्दिन तो कभी नहीं आया। सुबह-सुबह बोहनी ही बिगड़ गई। कभी मैंने दिया नहीं था, आज देना पड़ा। खुद सम्राट मांगने खड़ा था। आज इस झोली में एक दाना कम है। आज मेरा चित्त पश्चाताप से भरा है।

पत्नी ने झोली उंडेली, दोनों चौंक कर खड़े रह

गए। चावल के दानों के ढेर में एक दाना सोने का था। एक दाना उसने दिया था, वही सोने का हो गया था। कथा प्यारी है। हम जो देते हैं वही सोने का हो जाता है। जो हम बचा लेते हैं, वही मिट्टी हो जाता है। जीवन में जितना जो देता है, उतना ही उसका जीवन स्वर्णिम हो जाता है। मगर अब तो बहुत देर हो गई थी। अब तो वह पछताने लगा छाती पीट-पीट कर, काश मैंने पूरी मुट्ठी भर कर दे दी होती, तो सब दाने सोने के हो गए होते। मैं भी कैसा अभागा हूँ। लेकिन अब अवसर बीत चुका था। जीवन के बीत जानेपर बहुतों के जीवन का शीर्षक यही होता है- अवसर बीत गया। अवसर तो हमारे सामने भी आता है। संघ में आते हैं, थोड़ा समझने लगते हैं, संघ के पारिवारिक व सामाजिक भाव का आकर्षण अनुभव करते हैं तब हमें भी लगता है कि सोने के रथ में बैठकर संघ रूपी दानी राजा आ गया है। अब तो हमारे इस राजा की नसीब ही हमारी नसीब बन जाएगी। क्या-क्या मांगूंगा, यह कल्पना सरपट दौड़ती है लेकिन संघ ही हमसे मांग लेता है। मानवता के, राष्ट्र के, समाज के कल्याण के लिये आवश्यकता आन पड़ी है। समय की माँग है, तुम जो दे सकते हो, दे दो। हमारी तो ठगा सा खड़ा रहने की स्थिति बन जाती है। सोचते हैं क्या है हमारे पास जो इस माँग को पूरी करने के लिये दिया जा सकता है। जब अन्य कुछ दिखाई नहीं देता तो यही सूझता है-

ले लो या तो मेरे का मोह मेरा
या मैं खुद ही हो जाता हूँ तेरा

ऐसा जो करते हैं, उनके जीवन का शीर्षक- अवसर बीत गया नहीं हो सकता। उन्हें तो फिर वह दानी राजा युगों की मंजिल का हमराही बना लेता है।

अवसर आए तो चूकें नहीं। झोली सोने से भर सकती है मगर देंगे तो भरेगी। जोड़ने में लगे रहे तो मिट्टी ही हाथ में रह जायेगी। जो अहंकार से भरे हैं, जोड़ते हैं। पद जोड़ते हैं, प्रतिष्ठा जोड़ते हैं, ज्ञान, त्याग जो मिल जाए हर चीज को सम्पदा बना लेते हैं। हर चीज पर अकड़कर फन मारकर बैठ जाते हैं। जहाँ अकड़ है वहाँ नशा है। जहाँ अहंकार का नशा है, वहाँ आत्मज्ञान संभव नहीं। अहंकार हो तो आत्मज्ञान संभव नहीं, क्योंकि अहंकार ही असली मदिरा है। अंगूरों से नहीं निकलती असली शराब, असली शराब तो अहंकार से निचुड़ती है। और घर-घर में लोगों ने भट्टियाँ खोल रखी हैं, अहंकार से शराब निचोड़ने की भट्टियाँ। जो-जो भी मद से भरेंगे, उनके प्राणों में कभी सुबह न होगी। जागरण का उन्हें कभी कोई अनुभव न होगा, उनके जीवन में कभी प्रभात न होगा। इसलिए समर्पण-'मैं खुद ही हो जाता हूँ तेरा' ही अवसर का सदुपयोग है।

✻

पृष्ठ 27 का शेष

युद्ध की भिक्षा

गदा स्वयं ने ले ली और दोनों अखाड़े में भिड़ गए। दोनों वीर रात के समय मित्र के समान रहते और दिन में एक दूसरे पर भयंकर प्रहार करते। इस प्रकार लड़ते-लड़ते सत्ताइस दिन बीत गए। अट्ठाइसवें दिन भीमसेन ने ममेरे भाई भगवान श्रीकृष्ण से कहा,-मैं युद्ध में जरासन्ध को नहीं जीत सकता। भगवान श्रीकृष्ण जरासन्ध के जन्म और मृत्यु दोनों का रहस्य जानते थे कि जरा राक्षसी ने जरासन्ध के शरीर के दो टुकड़ो को जोड़कर इसे जीवन दान दिया था। भगवान ने जरासंध की मृत्यु का उपाय जानकर व एक वृक्ष की डाली को बीचों बीच से चीरकर भीमसेन को इशारे से समझाया। इस पर भीमसेन ने जरासंध को पृथ्वी पर गिरा लिया और एक पैर को दबाकर दूसरे को पकड़कर उठाया और उसको चीर दिया। जरासन्ध के शरीर के दो टुकड़े हो गये। इसके पश्चात जरासन्ध के पुत्र सहदेव का अभिपेक कर उसे राजसिंहासन पर बैठा दिया और बन्दी राजाओं को कारगार से मुक्त कर दिया। इसके पश्चात् इन्द्रप्रस्थ पहुँचकर महाराज युधिष्ठिर को जरासंध के वध की सूचना दी। महाराज युधिष्ठिर ने फिर राजसूय यज्ञ किया।

– : शिविर सूचना :–

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं–

क्र.सं.	शिविर	समय	मार्ग आदि
1.	प्रा.प्र.शि.	12.8.2018 से 15.8.2018	सूरत (गुजरात)
2.	प्रा.प्र.शि.	17.8.2018 से 19.8.2018	सरसाव, तह. कड़ी, जिला–मेहसाणा।
3.	प्रा.प्र.शि.	17.8.2018 से 19.8.2018	गांधीनगर– समर्पण कॉलेज, सेक्टर–28, गांधीनगर (गुजरात)।
4.	प्रा.प्र.शि.	18.8.2018 से 21.8.2018	बैण्यांकाबास (जयपुर), हिंगोनिया से 3 कि.मी. पर।
5.	प्रा.प्र.शि.	18.8.2018 से 21.8.2018	खवा रावजी, जिला–दौसा
6.	प्रा.प्र.शि.	18.8.2018 से 20.8.2018	दूदोसण (गुजरात), सगत माताश्री का मंदिर, सुईगाम–झझाम मार्ग।
7.	प्र.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	कारटिया (बाड़मेर) सेड़वा से धोरीमन्ना मार्ग पर, हर घण्टे बस।
8.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	करणू, नागौर–फलोदी मार्ग पर स्थित।
9.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	धोबा (जैसलमेर) जैसलमेर, खुहड़ी, म्याजलार से बसें उपलब्ध।
10.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	पून्दलसर, श्री डूंगरगढ़ से बीदासर मार्ग पर। सम्पर्क– जेठूसिंह पून्दलसर–9928070252
11.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	गुड़ामालानी–परमहंस पब्लिक स्कूल, रावत पृथ्वीराजगढ़, नयानगर गुड़ामालानी से बालोतरा मार्ग पर–हर समय साधन।
12.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	हरसाणी (बाड़मेर), माल्हण मंदिर हरसाणी, बाड़मेर व शिव से बसें।
13.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	रोहिचा कलां (लूणी जोधपुर), दलेखां चक्की जोधपुर से बसें।
14.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	लोड़ता (शेरगढ़–जोधपुर)
15.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	रूद (चित्तौड़गढ़)

16.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	पूरण (भूतेश्वर महादेव), मालवाड़ा से सूंधा माताजी मार्ग पर।
17.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 11.8.2018	धवालीमाता उम्मेदगढ लोटीवाड़ा, जावाल व सियाणा से बस। सम्पर्क- पाबूसिंह मांडाणी-9413852579
18.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	नाडोल-रानी, पाली व देसूरी से बसें।
19.	प्रा.प्र.शि.	19.8.2018 से 22.8.2018	बलाड़ा (जैतारण), जैतारण से बसें।
20.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 3.9.2018	सिद्धपुर (गुजरात) बालकेश्वर महादेव मंदिर।
21.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	1.9.2018 से 3.9.2018	सूरत (गुजरात)
22.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	गंगाला (सोढों की ढाणी), चोहटन से खड़ीन मार्ग पर, निजी बसें उपलब्ध।
23.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	धौलिया-फलोदी से हर दो घण्टे में बस। पोकरण से प्रात: 7.15 व सायं 3 बजे बस। नोख से प्रात: 8 व सायं 8 बजे बस। सम्पर्क- गिरधारीसिंह धौलिया-9982314264
24.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	कोयल-निम्बी जोधा से साधन उपलब्ध। सम्पर्क- 9950134267
25.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	ठाकरियावास-डीडवाना से बस उपलब्ध।
26.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	रेड़ी (चूरू) सम्पर्क- 9610925626
27.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	कावनी-पूगल फांटा बीकानेर से बसें उपलब्ध। सम्पर्क- छैलूसिंह कावनी-9928827533
28.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	झालोड़ा-पोकरण व फलसूण्ड से बस।
29.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	धारणा-रावला बेरा। सिवाना-पादरू मार्ग पर धारणा उतरकर निम्बाला रोड़ रावला बेरा पहुँचे।
30.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	भेड़ (ओसियाँ)
31.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	1.9.2018 से 4.9.2018	बेलवा-श्री मंगल बाल उ.मा. विद्यालय बेलवा (शेरगढ)
32.	प्रा.प्र.शि.	1.9.2018 से 4.9.2018	मारवाड़ जं.-सरस्वती विद्या मंदिर। पाली व सोजत से साधन।

33.	प्रा.प्र.शि.	8.9.2018 से 10.9.2018	जाडी-तह. धानेरा। धानेरा से रेल व बस सेवा।
34.	प्रा.प्र.शि.	16.9.2018 से 19.9.2018	डंडाली-गोपणेश्वर महादेव मंदिर-सिणधरी, बालोतरा व बायतु से बसें।
35.	प्रा.प्र.शि.	16.9.2018 से 19.9.2018	मोड़ी माताजी (म.प्र.)-तह. जावद, जिला-नीमच।
36.	प्रा.प्र.शि.	16.9.2018 से 19.9.2018	जगदीश उमरी जिला-भीलवाड़ा, रायपुर व बोराणा से बस।
37.	प्रा.प्र.शि.	16.9.2018 से 19.9.2018	चावण्ड-महाराणा प्रताप समाधि स्थल। सलुम्बर-परसाद रोड़ पर।
38.	प्रा.प्र.शि.	16.9.2018 से 19.9.2018	फतहनगर, चित्तौड़-उदयपुर मार्ग पर वाया मावली।
39.	प्रा.प्र.शि.	18.9.2018 से 21.9.2018	दासपां-भीनमाल व सियावट से बस सम्पर्क- भैरूसिंह दासपां-9769218714
40.	प्रा.प्र.शि.	18.9.2018 से 21.9.2018	विरोल-शिव मंदिर। सांचोर से बस। सम्पर्क- देवेन्द्रसिंह विरोल-7976005765
41.	प्रा.प्र.शि.	18.9.2018 से 21.9.2018	मालगढ (आहोर), भाद्राजून से बस। सम्पर्क- गणपतसिंह भंवरानी-9828136005
42.	प्रा.प्र.शि.	19.9.2018 से 22.9.2018	जैसलमेर
43.	प्रा.प्र.शि.	19.9.2018 से 22.9.2018	नोखा गाँव-नोखा शहर से 5 कि.मी. बीकानेर रोड़ पर। सम्पर्क- मेघसिंह नोखा गाँव-9413311885
44.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	रिड़मलसर, नागोर-फलोदी मार्ग पर चाडी उतरें, वहाँ खूब साधन हैं। बीकानेर, फलोदी, जोधपुर से सीधी बस। सम्पर्क- श्रवणसिंह-8003407777
45.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	जेवलियावास-डीडवाना से बस। सम्पर्क- मंगेजसिंह-9829842658
46.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	जलनियासर-नागोर से सीधी बस।
47.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	लापोड़िया-दूदू से हरसोली, हरसोली से 3 कि.मी. दूर लापोड़िया।
48.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	नाथूसर-रींगस से अजीतगढ़ रोड़ पर।
49.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	सूरजपुरा रोड़, जाली फार्म, दौसा।

50.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	कोटी खेड़ी-बहरोड़ से अटेली मण्डी मार्ग पर।
51.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	बाड़मेर-भारतीय ग्राम्य आलोकायन आश्रम। गेहूँ-विशाला रोड़ पर।
52.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	नानण, पीपाड़-बोरून्दा मार्ग पर।
53.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	आसरलाई-देचू से टैक्सी।
54.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	कबरई (उ.प्र.) रेलमार्ग से महोबा, वहाँ से बस द्वारा कबरई।
55.	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	20.9.2018 से 23.9.2018	चरखारी, महोबा से चरखारी किला ऑटो या बस द्वारा।
56.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	धामड़ोज (गुड़गाँवा)
57.	प्रा.प्र.शि.	20.9.2018 से 23.9.2018	ताल (म.प्र.)-तहसील-विक्रमगढ आलोट, जिला-रतलाम।
58.	प्रा.प्र.शि.	21.9.2018 से 24.9.2018	झाक (बाटाड़ा)-बाड़मेर से नीम्बला होते हुए मौखव गाँव के पास झाक बाटाड़ा, नागणेची माता मंदिर।
59.	प्रा.प्र.शि.	21.9.2018 से 24.9.2018	रोहट-गाजणमाता मंदिर धर्मधारी-रोहट व पाली से साधन।
60.	प्रा.प्र.शि.	21.9.2018 से 23.9.2018	सच्चाणा (गुजरात), खेतिया नागदेव। साणंद-वीरमगाँव रोड़ पर स्थित।
61.	प्रा.प्र.शि.	27.9.2018 से 30.9.2018	रायसर, बीकानेर से डूंगरगढ़ मार्ग पर स्थित।
62.	प्रा.प्र.शि.	27.9.2018 से 30.9.2018	बरडाना, नाचना-रामदेवरा मार्ग पर स्थित।
63.	प्रा.प्र.शि.	27.9.2018 से 30.9.2018	कांकराला, बालोतरा, समदड़ी व कल्याणपुर से बसें।
64.	प्रा.प्र.शि.	27.9.2018 से 30.9.2018	लूणावास कलां, जोधपुर में दलेखां चक्की से बस।

✲ गणवेश व आवश्यक साहित्य लेकर आवें।

राजेन्द्रसिंह बोबासर

शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

हुकुम सिंह कुम्पावत (आकडावास, पाली)

शिव ज्वैलर्स

विश्वसनीयता में एक मात्र नाम

22/22 कैरेट हॉलमार्क आभूषण,
न्यूनतम बनवाई दर पर

शुद्ध राजपूती आभूषण (बाजूबन्द, पूछी, बंगडी, नथ आदि)
तैयार उपलब्ध एवं ऑर्डर से भी तैयार किये जाते है।

विशेषज्ञ :- सोने व चाँदी की पायजेब, अंगूठी, डायमण्ड, कुन्दन के आभूषण, बैंकॉक आईटम्स आदि

जी-1, सफायर कॉम्पलेक्स, जैन मेडिकल के सामने, खातीपुरा रोड़, झोटवाड़ा, जयपुर
मो. 7073186603, 8890942548 ब्रांच :- बैंगलोर व मुम्बई

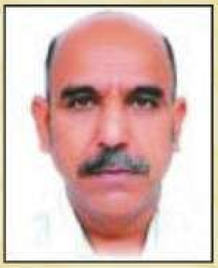

Sharwansingh Jaitawat
9326805192
020-65107720
65107740
27660466

Shree Mahavir Plywood & Hardware

Plywood
Frame
Flush Door

Moulding
Lipping
All Types of woods

Carving
Laminate
All Brass Fitting

Sharwansingh S/o. Dungarsingh Jaitawat
V.P.O. Dhunda Lambodi, Tal.-Sojat, Distt.-Pali

Shop Add. :- Chikhali Road, M.I.D.C., 'G' Block, PL. No. PAP-24
Kasturi Market, Sambhaji Nagar, Chinchwad, Pune-19

प्रेम पौशाक

समस्त राजपूती पौशाकों के होलसेल विक्रेता

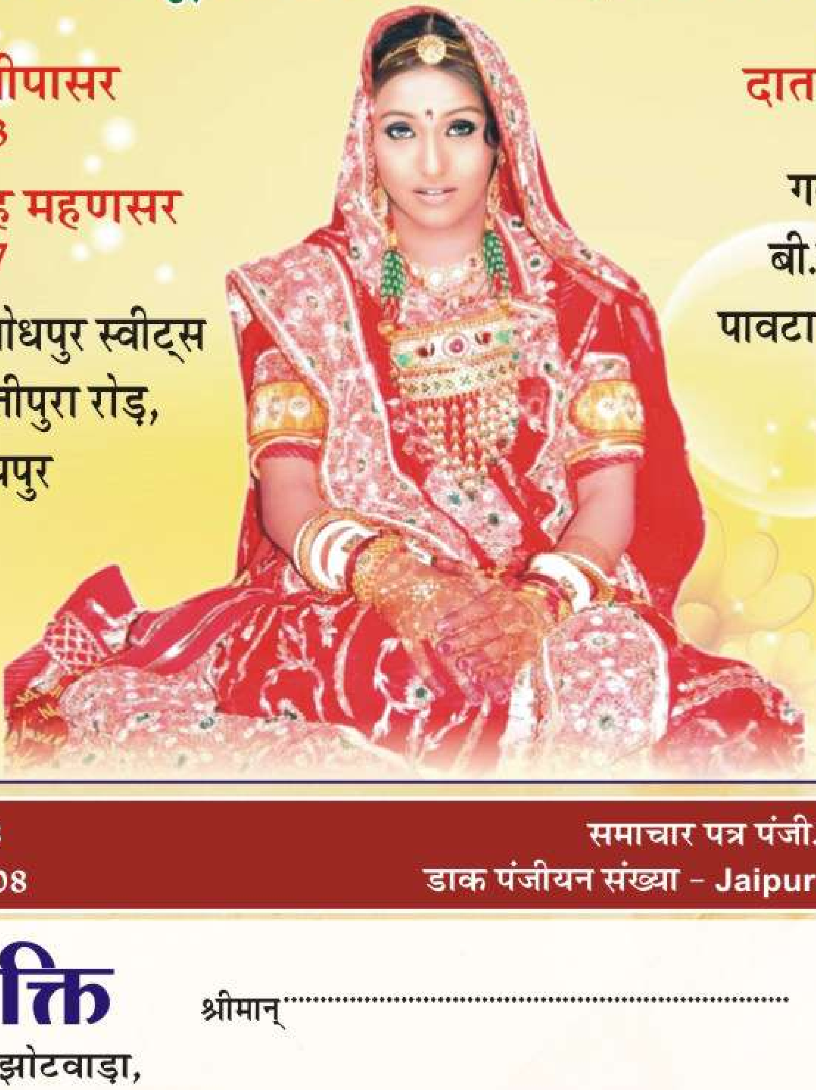

भँवर सिंह पीपासर
9828130003

रिडमल सिंह महणसर
9829027627

शॉप नं. 93, जोधपुर स्वीट्स के सामने, खातीपुरा रोड़, झोटवाड़ा, जयपुर

दातारसिंह दुगोली
7339926252
गली नं. 16 कॉर्नर, बी.जे.एस. कॉलोनी, पावटा बी रोड़, जोधपुर

अगस्त, सन् 2018
वर्ष : 55, अंक : 08

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2017-19

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह